अनुक्रमणिका

विषय-सूची   पृष्ठ-संख्या

०१. भगवदाराधना से भाव-संसिद्धि ०३
०२. वास्तविक ब्रजोपासना..........०५
०३. सतत् संतुष्टि ही सच्ची भक्ति..........०७
०४. मुरलिका-हरण लीला..........०९
०५. भक्ति-दीपक 'ज्योतिपंतजी'..........११
०६. सुविजय-सूचिका 'गौमाता'..........१५
०७. परम प्रेम का प्रारूप..........२०
०८. असद्वासना का आधार 'अहंकार'..........२२
०९. तत्त्व-ज्ञान से विशुद्ध भावोदय..........२४
१०. आस्ट्रेलिया में बाल व्यासाचार्या श्रीजी द्वारा उद्बोधन..........२६
११. अमेरिका (मंगल मन्दिर) में साध्वी मुरलिकाजी का सम्भाषण..........२७
१२.श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान द्वारा प्रभातफेरी व भगवन्नाम का तीव्रगति से प्रचार-प्रसार....... २९
१३. परमपावनकारी सर्वसुहृद 'भगवद्'-भागवतजन'..........३१

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्यो |

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,

गह्वरवन बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :ms@maanmandir.org)

mob. : 9927338666, 9837679558

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान -

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

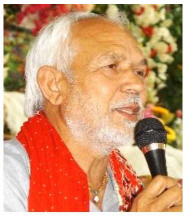

प्रकाशकीय

जो सहि दुःख परछिद्र दुरावा | बंदनीय जेहिं जग जस पावा ||

परदोषदर्शन की प्रवृत्ति बहुधा अधिकांश प्राणियों में देखी जाती है, दोषदर्शी या निंदक प्राणी यह नहीं समझता कि हम सहज में कितनी बड़ी हिंसा कर रहे हैं, भक्तजन सदा इससे बचा करते हैं | दुर्वासाजी द्वारा अम्बरीषजी की हिंसा करने में कितना प्रयास किया गया था - कृत्या को प्रकट किया परन्तु क्या भक्त का कोई अमंगल 'कृत्या या दुर्वासाजी' कर पाए ? निंदक या हिंसक को भगवत्कृपा नहीं मिलती | दुर्वासाजी ने चक्राग्नि से बचने के लिए समस्त देवी-देवताओं की शरण ग्रहण की परन्तु उन्हें कहीं शरण नहीं मिली | कोई व्यक्ति कितना ही बड़ा योगी-जपी-तपी अथवा यशस्वी व धन-धान्य से सम्पन्न है परन्तु वह यदि किसी भक्त का अपराध करेगा तो स्वतः नष्ट हो जायेगा | कौरवों ने पांडवों को नष्ट करने के क्या-क्या प्रयत्न नहीं किये परन्तु वे उनका बाल भी बांका नहीं कर सके |

"जाकौ राखै सांइया, मार सकै न कोय |
बाल न बांका कर सकै, जो जग बैरी होय |"

प्रह्लादजी के पास यही सबसे बड़ा धन था, उन्होंने अपने मारने वाले हिरण्यकशिपु तक का भी कभी अमंगल नहीं सोचा, यही कारण था कि उनका अमंगल वह दुर्दान्त दानव भी नहीं कर सका; 'ऐसे परम दिव्य गुण' लगता है हमारे अन्दर हमारे किन्हीं सत्कर्मों से आ जाएँ, यह संभव नहीं दिखाई देता है क्योंकि 'सिद्धि' साधनसाध्य नहीं अपितु कृपासाध्य है; भगवत्कृपा मिलती है अथवा महत्कृपा मिलती है तो सब कुछ सम्भव हो जाता है | ध्रुवजी की माता सुनीति ने भी यही कहा था - "बेटा ध्रुव ! तुम अपनी विमाता द्वारा किये दुर्व्यवहार का चिंतन मत करो और उनका अमंगल भी मत सोचो |" इसी मंगलमयी भावना का चमत्कार था कि मात्र छः माह में ध्रुवजी ने प्रभु-प्राप्ति कर ली | एक भक्त सारी त्रिलोकी को पावन बना देता है क्योंकि वह सदा भगवान् की भाँति करुणावरुणालय बना रहता है |

ब्रज-वसुंधरा के परम विरक्त संत श्रद्धेय श्रीबाबामहाराज ने भी अपनी वात्सल्यमयी करुणा से जाने कितने ही जीवों को भगवद्-रसाप्लावित कर उन्हें निर्मल बना दिया | उनके आश्रम में देखा जाता है कि आबाल, वृद्ध समस्त साधक-साध्वी व संतजन सतत् समस्त प्रकार की हिंसा से बहुत दूर रहकर प्रभु-कृपा पा रहे हैं | कहीं राग-द्वेष, मद, मोह, लोभ की कैसी भी प्रवृत्ति नहीं दिखाई पड़ती है, लगता है कि यहाँ कहीं भी कलि का प्रवेश तक नहीं है | 'प्रतिक्षण प्रभु-चिंतन' से न केवल आत्मकल्याण की भावना दृष्टिगोचर होती है अपितु उन सबकी भावना लोककल्याणमयी होती जा रही है |

राधाकांत शास्त्री
व्यवस्थापक, मान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

भगवदाराधना से भाव-संसिद्धि

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'नाम-महिमा' (२३,२४/५/२०१०) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री एवं लेखिका- बालसाध्वी अर्चना जी, दीदीजी गुरुकुल, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे) – नवधा भक्ति का निरूपण श्रीमद्भागवत में प्रह्लादजी ने किया है –

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ७/५/२३)

नवधा भक्ति है- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, पूजन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन | ये जितने भी प्रकार की भक्ति हैं, ये चौमासा हैं और सावन-भादों अर्थात् भगवन्नाम से ही बढ़ती हैं, पुष्ट होती हैं | कथनाशय है कि भगवन्नाम के आश्रय के बिना कोई भी भक्ति पुष्ट नहीं होगी | इसलिए चौमासे (वर्षा ऋतु के चार महीने) में सावन-भादों ही है मुख्य अर्थात् समस्त प्रकार की भक्ति का मूल साधन 'भगवन्नाम' है और जिसको नाम में रुचि नहीं हुई, उसको समझ लेना चाहिए कि अभी हम भगवान् की भक्ति से विमुख हैं | कुछ लोग उपरोक्त दोहे का ये भी अर्थ करते हैं कि जैसे छः ऋतुयें होती हैं, अगर सावन-भादों में वर्षा न हो तो सारी ऋतुयें शून्य हो जायेंगी | चाहे वसंत ऋतु है अथवा कोई भी ऋतु है, संसार में सबका साधन जल है | पांचों ऋतुयें क्या हैं, ये है पंचदेवों की भक्ति | पंचदेव-उपासना भारत में पहले बहुत प्रचलित थी, अब भी इसका प्रचलन है | पञ्च देव हैं - (१) गणेश (२) दुर्गा (३) शिव (४)सूर्य (५) विष्णु | पंचदेव-उपासना के ये पाँच देव पाँच ऋतुयें है | बिना भगवन्नाम के पञ्च देवों की भक्ति भी सिद्ध नहीं होगी | गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस बालकांड में नाम-महिमा के प्रकरण में शिवजी का उदाहरण दिया कि वे निरंतर 'राम' नाम का जप करते रहते हैं,उनके बाद देवी पार्वती का उदाहरण दिया, गणेशजी और सूर्यदेव का भी उदाहरण नाम- महिमा के सन्दर्भ में दिया गया है | नाम-महिमा से सम्बन्धित सबसे पहली चौपाई है –

बंदउँ नाम राम रघुवर को ।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड- १९)

इसमें सूर्य का उदाहरण दिया गया है | इससे स्पष्ट हो जाता है कि स्वयं पांचों देवों की उपासना 'भगवन्नाम' से ही सिद्ध होगी | इसलिए बिना नाम के कोई भी भक्ति सिद्ध नहीं होगी चाहे वह प्रेमरूपा भक्ति है, चाहे रसरूपा भक्ति है, चाहे कोई भी प्रकार की भक्ति हो | जिसको भगवान् के नाम में रुचि नहीं है, उसको भक्ति की आशा छोड़ देनी चाहिए | वह केवल बात ही बात कर रहा है, भक्ति का प्रवेश तो उसके हृदय में नहीं होगा | इसे निश्चित रूप से समझ लेना चाहिये चाहे कितना बड़ा विद्वान् है, विरक्त है, जो स्वयं 'भगवन्नाम' उच्चारण नहीं करता है, वह शून्य है, उसको कभी भक्ति नहीं मिल सकती | यही इस दोहे का (रामचरितमानस, बालकाण्ड-१९) आशय है | छः ऋतुओं में यदि वर्षा ऋतु के द्वारा जल की प्राप्ति न हो तो सारे संसार में अकाल पड़ जाएगा | इसी प्रकार जिसमें भक्ति नहीं है तो उसके सभी कर्म सूख जायेंगे और भक्ति की सिद्धि के लिए नाम ग्रहण करना अति आवश्यक है जिस प्रकार वर्षा ऋतु के चार महीनों में भी सावन भादों में ही अपार जल की झड़ी लग जाती है |

ब्रह्माजी गोपालजी के सामने स्तुति करते हुए ब्रजभूमि की महिमा का वर्णन करते हुए अपनी अभिलाषा व्यक्त कर रहे हैं –

तद् भूरिभाग्यमिह जन्म किमप्यटव्यां ।
यद् गोकुलेऽपि कतमाङ्घ्रिरजोऽभिषेकम् ।
यज्जीवितं तु निखिलं भगवान् मुकुन्द-
स्त्वद्यापि यत्पदरजः श्रुतिमृग्यमेव ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/१४/३४)

हे भगवन्! कैसे भी इस परम पवित्र ब्रजभूमि में किसी भी निम्न से निम्न योनि में मुझे जन्म मिल जाये जबकि ब्रह्माजी तो सृष्टिकर्ता हैं, जगत्पिता हैं, भगवान् के गुणावतार हैं किन्तु गोपालजी की ब्रजलीला को देखकर वे इतने भावविभोर हो गये कि ब्रज के सामने वे अपने ब्रह्मलोक को तो भूल ही गये | गोपालजी की स्तुति करते समय उनका एक-एक शब्द अत्यधिक भावपूर्ण है | वस्तुतः भाव ही भक्ति है, जिसके अंदर भाव नहीं है, यह समझना चाहिए कि उसके अंदर लेशमात्र भी भक्ति नहीं है, भले ही वह बाहर से कितना भी नेम-टेम (ग्रन्थ-पाठ, जप, ध्यान और पूजा) कर ले, ज्ञान-वैराग्य युक्त हो जाये, कुछ भी बाह्य साधन कर ले किन्तु सच्चाई यही है कि भाव ही भक्ति है | श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के चौदहवें अध्याय में ब्रह्माजी के द्वारा गोपालजी की यह अत्यधिक भावपूर्ण स्तुति है | संस्कृत में होने के कारण प्रायः हर व्यक्ति इसके आशय को नहीं समझ पाता है | (श्रीमद्भागवतजी १०/१४/३४) में ब्रह्माजी कहते हैं – यद्यपि मैं ब्रह्मा अर्थात् गुणावतार भगवान् ही हूँ किन्तु मेरा भाग्य खुल जायेगा, भाग्य ही नहीं खुल जायेगा अपितु इससे अधिक मेरे ब्रह्मापने का सौभाग्य हो ही नहीं सकता कि मुझे ब्रज में किसी भी योनि में जन्म मिल जाये तथा यहाँ रहने वाले ब्रजवासियों, विशेषतया गोपियों की चरण रज मिल जाये | हम जैसे मूर्ख लोग भला ब्रजगोपियों की महिमा कैसे जान सकते हैं, जब जगत्पिता और सृष्टिकर्ता स्वयं भगवान् के गुणावतार ब्रह्माजी कह रहे हैं कि यदि इन ब्रजदेवियों की चरणरज मुझे मिल जाये तो यह मेरा भाग्य ही नहीं भूरिभाग्य है अर्थात् सबसे अधिक, अनंत भाग्य होगा | 'तद् भूरिभाग्यमिह' – 'इह' का अर्थ है इसी ब्रज में, न कि ब्रह्मलोक में | ब्रज के प्रति ब्रह्माजी के मन में ऐसा दिव्य भाव उत्पन्न हुआ | कोई उनसे कहे कि ब्रज में तो जन्म-मरण भी होता है तो वह कहते हैं कि इस तरह की व्यर्थ की बातें छोड़ो | मैं तो यही चाहता हूँ कि इस ब्रजभूमि में मेरा जन्म हो जाये | किसी ने पूछा कि लोग तो जन्म-मृत्यु से छूटना चाहते हैं तो ब्रह्माजी बोले कि ऐसे लोगों की चर्चा छोड़ो, तार्किक लोग ब्रज की महिमा नहीं समझ सकते | 'भाव' के आगे सब तर्क समाप्त हो जाते हैं | भाव के आधीन तो स्वयं भगवान् हो जाते हैं, फिर कोई समस्या ही नहीं रह जाती है, भाव ऐसी शक्ति है | मानमन्दिर पर रहने वाले एक परम विरक्त संत श्रीवीरबाबा के गोलोकवास हो जाने पर उनकी स्मृति, उनके सम्मान में ब्रजवासियों और संतों ने अनेकों पंगतों का आयोजन किया जबकि ब्रज में अन्य कितने ही साधु-संतों और महंतों का निधन हुआ परन्तु उनकी स्मृति में इतनी अधिक पंगतों का आयोजन नहीं किया गया | इसका कारण केवल यही है कि वीर बाबा के हृदय में ब्रज और ब्रजवासियों के प्रति विलक्षण भाव था | वह भिक्षा माँगने बरसाने के निकटवर्ती ग्राम डभारा प्रतिदिन जाते थे और वहाँ की गूजरियों (गोपियों) के प्रति उनका अलौकिक भाव था | लोग उनका उपहास करते थे, उनसे व्यंग्य करते थे किन्तु उनका यही भाव रहता था कि ये स्त्रियाँ नहीं हैं, ये ब्रज की गूजरियाँ (गोपियाँ) हैं, कृष्ण की प्रेयसियाँ हैं | वीर बाबा के दिवंगत होने पर वे ब्रज की गूजरियाँ बहुत रोयीं | संसार के लोग तो भाव को पहचान नहीं पाते, वे भाव का मजाक बनाते हैं | हर आदमी भाव का उपहास करता है क्योंकि भाव को समझ नहीं पाता | भाव वह शक्ति है कि यदि किसी के हृदय में आ गया तो फिर सारे तर्क-वितर्क, वेद-शास्त्र आदि की मर्यादायें समाप्त हो जाती हैं क्योंकि जब स्वयं भगवान् ही भाव के आधीन हो जाते हैं तो फिर और किसी का क्या महत्व रह जायेगा |

.....क्रमशः

वास्तविक ब्रजोपासना

श्रीबाबामहाराज के यात्रा-सत्संग (२९ अक्टूबर २०१८) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- बालसाध्वी लक्ष्मी जी, दीदीजी गुरुकुल, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे-) (श्रीबाबामहाराज के शब्दों में) –

प्रह्लादजी ने नृसिंह भगवान् से कहा – हे नरहरे ! मेरे पिता ने आपसे वैर किया, उनकी क्या गति होगी? भगवान् ने कहा –

त्रिःसप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ ।
यत्साधोऽस्य गृहे जातो भवान् वै कुलपावनः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ७/१०/१८)

२१ पीढ़ियों के सहित तेरे पिता का उद्धार हो गया है | तुम्हारे जैसा कुलपावन पुत्र उत्पन्न हुआ तो २१ पीढ़ियों का उद्धार हो गया | प्रह्लादजी से नृसिंह भगवान् ने कहा कि तू मुझसे कुछ ले ले, जिस राज्य को हिरण्यकशिपु ने बड़ी तपस्या से प्राप्त किया, वह सब राज्य तू ले ले किन्तु प्रह्लादजी ने कहा - महाराज ! मैं नहीं लूँगा | मैं आपसे कुछ नहीं चाहता हूँ –

नान्यथा तेऽखिलगुरो घटेत करुणात्मनः ।
यस्त आशिष आशास्ते न स भृत्यः स वै वणिक् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ७/१०/४)

जो आपका भक्त बनता है और आपसे कुछ चाहता है, पैसा, भोग आदि कुछ भी चाहता है तो वह बनिया है, भक्त नहीं है, न है और न होगा |

विनाशी चीजों की कामना नहीं करना चाहिए जो हमें नष्ट कर देंगी | क्यों धन चाहते हो, अरे भगवान् सबको खाने-पीने को अन्न-जल देता है, अपने शत्रु को भी देता है | बिना चाहे देता है, फिर क्यों व्यर्थ वासना रखकर अपने को भक्त मानते हो, धिक्कार है !!

देखो, बिना चाहे सब चीजें मिलती हैं | हम भी एक छोटे- से जीव हैं, इस वर्ष यात्रा प्रारम्भ होने के पहले हम सोचते थे कि इस बार यात्रा कैसे उठेगी क्योंकि १५ हजार व्यक्तियों के भोजन, औषधि, तम्बू-तनात आदि की व्यवस्था करना और साधन तो कुछ भी नहीं है इसलिए हमें भी चिंता होती थी | यात्रा में भक्तजन आते हैं, ऐसा नहीं कि हमारे रिश्तेदार आदि आते हैं |

(बाबाश्री ब्रजयात्रियों को संबोधित करते हुए कह रहे हैं)

आप सभी लोग भक्त हैं और आपको भगवान् की कृपा प्राप्त हो गयी है | इसीलिए मैं यहाँ (काम्यवन धाम में) सभी भक्तों को बधाई देने आया हूँ (आशीर्वाद देने की तो सामर्थ्य मुझमें नहीं है); आप लोगों ने ऐसा यज्ञ (ब्रजयात्रा रूपी महायज्ञ) पूर्ण किया है जो ब्रह्माजी को भी दुर्लभ है |

भागवत में लिखा है –

इत्यभिष्टूय भूमानं त्रिः परिक्रम्य पादयोः |
नत्वाभीष्टं जगद्धाता स्वधाम प्रत्यपद्यत ||

(श्रीमद्भागवतजी १०/१४/४१)

ब्रह्माजी ने पैदल चलकर ब्रज की तीन परिक्रमा की (अपने वाहन हंस पर बैठकर, आकाश में उड़कर परिक्रमा नहीं की, 'पादयोः' अर्थात् अपने पाँवों से वे ब्रजभूमि में नंगे पैर चले) जैसे आप लोगों ने पैदल चलकर परिक्रमा की है | ब्रह्माजी ने तीन ब्रज-परिक्रमायें इस उद्देश्य से किया कि मेरे द्वारा ब्रजभक्तों (ग्वालबालों और बछड़ों) का भगवान् श्रीकृष्ण से जो वियोग हुआ, वह अक्षम्य अपराध है, किन्तु ब्रज-परिक्रमा से वह अक्षम्य अपराध भी नष्ट हो जाएगा |

आपका यह यज्ञ निर्विघ्न सफल हुआ और मैं चाहता हूँ कि प्रतिवर्ष आप लोग 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' में आयें, इस जीवन में यह सबसे बड़ा लाभ है; आपके आने से मुझको भी सेवा का अवसर मिलता है यद्यपि मेरा शरीर तो अस्वस्थता के कारण सेवा नहीं कर सकता लेकिन एक समय वह था जब मैं चिंता कर रहा था कि इतने हजार लोगों के भोजन, आवास और अन्य सुविधाओं की यात्रा में व्यवस्था कैसे होगी और प्रबंध कुछ है नहीं परन्तु प्रभु ने इतना दिया कि नैया पार लग गयी |

भगवान् के भक्तों की सेवा से रिद्धियाँ-सिद्धियाँ अपने- आप आती हैं | किसी से कुछ भी नहीं माँगा गया और सभी ब्रजयात्रियों की निःशुल्क व निष्काम भाव से बहुत बढ़िया सेवा हुई, यह श्रीजी की परम कृपा व भक्तजनों के आशीर्वाद का फल है | श्रीभगवान् को सेवकजन व उनकी भावपूर्वक सेवा करने वाले बहुत प्यारे लगते हैं -

सुन सुरेस उपदेस हमारा | रामहि सेवक परम पियारा ||
मानत सुख सेवक सेवकाई | सेवक बैर बैर अधिकाई ||

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड – २१९)

भक्तों की सेवा बड़े भाग्य से मिलती है और भगवान् ने कृपा किया तो इन दोनों बहनों (मुरलीजी और श्रीजी) ने यथा सामर्थ्य सेवा किया | बड़ी बहन मुरलिकाजी ने मेरे अस्वस्थ होने के बाद सात वर्षों तक यात्रा की सेवा की तथा दो खण्डों में रसीली ब्रजयात्रा नामक ग्रन्थ लिखा और छोटी बहन श्रीजी ने इस वर्ष यात्रीजनों की सत्संग- सेवा किया | इन्हें मैं क्या दे सकता हूँ, देने वाला कोई और है, वही देगा | एकबार गह्वरवन के प्रसिद्ध संत पंडित हरिश्चंद्रजी ने मुझे समझाते हुए उपदेश दिया था कि अपने मन में विचार करो कि तुम ब्रज में अपने शरीर की उपासना करने आए हो अथवा भगवान् की उपासना करने, ध्यान से इस बात को समझो कि ब्रज का कण-कण चिन्मय है | यहाँ की लता-पता, यहाँ के वृक्ष सब चिन्मय हैं | राधासुधानिधि में भी कहा गया है –

ये क्रूरा अपि पापिनो न च सतां सम्भाष्य दृश्याश्चये सर्वान्वस्तुतया निरीक्ष्य परम स्वाराध्य बुद्धिर्मम ॥२६४॥

ब्रज में निवास करना है, ब्रज की उपासना करना है तो इस श्लोक को समझना बहुत आवश्यक है | धामोपासना का यह चमकता हुआ दिव्य श्लोक है, हमारे गुरुदेव इस श्लोक को बहुत कहा करते थे | इसका भाव यह है कि ब्रजभूमि में जो भी रह रहे हैं उनके बारे में ऐसा समझो कि ये उच्च कोटि के योगीन्द्रगणों से भी अधिक उत्कृष्ट हैं | एक-दो नहीं अपितु जितने भी ब्रजवासी यहाँ रह रहे हैं, सभी घनीभूत आनंद की साक्षात् मूर्ति हैं | ऐसा क्यों ? क्योंकि यह धाम की अद्भुत महिमा है | हाड़-मांस के आदमी में कोई चमत्कार नहीं है | चमत्कार इस बात का है कि कोई व्यक्ति यहाँ रह रहा है, वह बिना कृपा के तो कोई यहाँ नहीं रह सकता, इसलिए यह धाम की महिमा है | प्रश्न उठता है कि ब्रज में चोर-बदमाश आदि भी दिखाई पड़ते हैं तो इसी श्लोक में ही कहा गया है कि कोई ब्रजवासी ऐसा पापी है कि देखने योग्य भी नहीं है, उससे बात करना भी ठीक नहीं है परन्तु ऐसे पापी को देखकर भी उसके प्रति हमारी आराध्य बुद्धि हो जाए, ये है - धामोपासना (धामाराधना करने की समुचित परिपाटी) | ब्रज में तुम यदि किसी पर क्रोध करके, लड़-झगड़कर उसे पराजित भी कर देते हो तो कुछ नहीं मिलेगा | ब्रज में यदि राग-द्वेष के कर्म करोगे तो यह धामोपासना नहीं होगी | हम लोग कर्म तो राग-द्वेष के करते हैं किन्तु ऊपर से माला जपते हैं | इसीलिए नारदजी ने प्रचेताओं से कहा कि लाख जन्म तक उपासना करोगे फिर भी भगवान् ग्रहण नहीं करेंगे | अकिंचन भक्तों का अपराध करते हो तो साधु बनकर घूमते रहो माला फेरते हुए और शास्त्रों का पाठ करते हुए परन्तु इससे कोई लाभ नहीं होगा | वास्तव में ब्रजभूमि का उपासक बनना है तो राधासुधानिधि के उपरोक्त श्लोक में जैसा कहा गया है, उसके अनुसार धाम में रहने वाले अत्यंत क्रूर महापातकी मनुष्यों के प्रति भी आराध्य बुद्धि रखनी पड़ेगी | रामायण में भी यही बात कही गई है –

सिय निन्दक अघ ओघ नसाए | लोक बिसोक बनाइ बसाए ||

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – १६)

अयोध्या में रहने वाले धोबी ने भगवती सीताजी की निंदा करने का ऐसा अक्षम्य अपराध किया था जो किसी भी जन्म में नष्ट नहीं हो सकता था, जानकीजी के आचरण पर उसने आक्षेप लगा दिया था | एक-दो नहीं, ऐसे अनेक लोग थे, उनका पूरा समुदाय था; ऐसे महा अपराधियों को भी शोक रहित करके धाम महाराज ने अपने भीतर आश्रय दिया, अवध में बसाये रखा, वहाँ से निष्कासित नहीं किया | भगवती सीता की निंदा रूपी पाप की प्रचंड धारा को धाम ने विनष्ट कर दिया | इसीलिए जब ऐसी उच्चकोटि की श्रद्धा को तुम धाम के प्रति रखोगे तो धाम के किसी भी प्राणी से चाहे वह दुरात्मा है, क्रूर है, पापी है, दर्शन व बात करने योग्य भी नहीं है, उसमें भी तुम्हारी स्वाराध्य बुद्धि हो जायेगी, यही धामवास करने की परिपाटी, धामोपासना की शैली है; ऐसी स्वाराध्य बुद्धि से यहाँ रहने पर ही धाम का चमत्कार होता है |

सतत् संतुष्टि ही सच्ची भक्ति

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गोपी गीत' (३/११/१९९५) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- बालसाध्वी वनदेवी जी, दीदीजी गुरुकुल, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे-) अंत में कूरेशजी रामानुज स्वामी की शरण में गए, उनसे दीक्षा ली | उन्होंने कहा कि अब मैं चलता हूँ लक्ष्मी-नारायण प्रभु के सामने, अब उनका दर्शन करूँगा | इसको कहते हैं दीक्षा | उन्होंने सर्वस्व का त्याग कर दिया - भीतर की भी सब वासना समाप्त हो गई और बाहर से भी खाली हाथ हो गए, अपने पास कुछ नहीं रखा | इनकी स्त्री परम सती और भक्त थी, कूरेशजी को सर्वस्व त्याग कर जाने के लिए तैयार देखकर उसने कहा कि मैं भी आपके साथ चलूँगी, मैं आपको नहीं छोड़ सकती | कूरेशस्वामी जी ने कहा – "अच्छा है, चलो | प्रभु की शरण में सभी को चलना चाहिए |" रास्ते में भयानक जंगल था तो उनकी स्त्री ने उनसे कहा कि स्वामी ! मुझे कुछ भय लग रहा है | कूरेश जी ने अपनी स्त्री से पूछा- "भय क्यों लगता है, तुम्हारे पास क्या है ? उस भय की उत्पत्ति करने वाले पदार्थ को निकाल कर फेंक दो |" उनकी स्त्री ने २-४ स्वर्ण की मुहरें रख लीं थीं कि अगर जंगल में कोई भोजन की व्यवस्था नहीं होगी तो चावल खरीद लेंगे, इमली का पना बना लेंगे | कूरेशस्वामीजी ने अपनी स्त्री से कहा कि इन स्वर्ण मुहरों को फेंक दो | इस प्रकार उन स्वर्ण मुद्राओं का अपनी स्त्री से त्याग करवा दिया | तत्पश्चात् कूरेशस्वामी वहाँ (लक्ष्मी-नारायण मन्दिर) गये और उन्होंने मन्दिरस्थ विराजमान भगवान् (लक्ष्मी-नारायण) का दर्शन किया |

भगवान् ने उन्हें प्रकट होकर साक्षात् स्वरूप (भक्तानुग्रहकारक रूप) की झांकी दिखाई | श्रीभगवान् के मूर्ति-विग्रह के २ स्वरूप होते हैं – (१) भक्तानुग्रहकारक, जिसका दर्शन विशुद्ध भक्तजनों को ही होता है | (२) सर्वानुग्रहकारक, जो सभी लोगों को दिखाई देता है | भक्तवत्सल श्रीभगवान् अपने सच्चे भक्तों को साक्षात् दर्शन देते हैं | श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् का साक्षात् दर्शन करके कूरेशजी और उनकी स्त्री वरदराज मंदिर से कुछ दूरी पर निवास करते हुए भजनपरायण हो गये | 'राजा कूरेशस्वामी' अपने राजमद को मलवत् त्यागकर; भिक्षुचर्या द्वारा भिक्षान्न से जीवन निर्वाह करते हुए; तीव्र भक्तियोग से सतत् भगवान् के चिन्तन में संलग्न रहते | एक बार अत्यन्त तीव्र वर्षा के कारण श्रीकूरेशस्वामीजी भिक्षान्न से वंचित रहे | लगातार घण्टों बरसात होने के कारण ऐसा कभी-कभी हो जाता है | इनकी पत्नी जो कि राज्य की महारानी थीं; उन्होंने प्रभु से प्रार्थना किया कि प्रभो ! चौथा पहर अपनी चरमावस्था पर है लेकिन हमारे पति की क्षुधातृप्ति के लिए एक अन्न का दाना भी प्राप्त नहीं हुआ है | कहने की देर थी कि वरदराज भगवान् ने तुरंत पुजारी को आज्ञा दी कि जाओ, मेरे भोग का थाल कूरेशजी के पास ले जाओ | इधर विधि के विधान से संतुष्ट 'कूरेशस्वामीजी' भगवान् के भजन में लीन थे | एक सच्चे भक्त की स्थिति तो कबीरदासजी ने अपने पद में वर्णित की है – "**न लेना न देना मगन रहना ||**" मिल गया तो ठीक; न मिला तो ठीक | सम्मान हो या अपमान, सभी परिस्थितियों में समान अवस्था भक्त की बनी रहती है | हम जैसे लोग ही असंतोषी, चंचल मन के होते हैं जो कि बात-बात पर क्रोध करते रहते हैं | भक्तिमार्ग में सांसारिक राग-द्वेष आदि द्वंद्व नहीं होते हैं | जब भोग का थाल उनके (कूरेशस्वामी जी के) पास पहुँचा, पुजारी

ने कहा कि ये थाल ठाकुरजी ने आपके लिए भेजा है | कूरेशजी सोचने लग गये कि हमने तो भोजन की सोचा ही नहीं था; हो सकता है हमारी स्त्री ने सोचा हो | उन्होंने अपनी स्त्री को बुलाया और पूछा कि क्या तुमने कुछ कामना किया था ? उसने कहा कि आपको आज सबेरे से कुछ भी खाने के लिए नहीं मिला तो मैंने मन में वरदराज भगवान् से प्रार्थना किया था कि आज मेरे पति ने सबेरे से कुछ भी नहीं खाया है | मैंने अपने लिए तो प्रार्थना नहीं किया था | तब कूरेशजी ने अपनी स्त्री से कहा कि देखो, आगे ऐसा कभी नहीं करना | प्राण निकल जायें लेकिन प्रभु से कामना नहीं करनी चाहिए | प्रभु से इन बातों की कामना नहीं करना चाहिए कि आज हमको रोटी नहीं मिली, आज हमको भोजन नहीं मिला, आज ये नहीं मिला, आज कपड़ा नहीं है | बड़े-बड़े भक्तलोग ऐसे होते हैं कि प्राण चले जाएँ किन्तु भगवान् से किसी प्रकार की भी कोई कामना नहीं करते | एक सज्जन कुछ दिन पहले मान मन्दिर आये हुए थे, उन्होंने बरसाने की १०८ परिक्रमा की | श्री बाबा महाराज ने उनसे पूछा कि १०८ परिक्रमा किसलिए दे रहे हो ? उन्होंने कहा कि हमारी कुटिया बनी है किन्तु उसमें किवाड़ नहीं लगी है | उनकी बात सुनकर महाराजजी चुप रहे क्योंकि ऐसे लोगों को ज्ञान देना भी कठिन है | इसके पीछे एक कारण यह भी है कि जब मनुष्य शुरू में भजन करने के लिए आता है, तो साल-दो साल तक तो वह कुछ सुनता भी है और साल-दो साल बाद उसको सिद्धाई चढ़ जाती है | फिर वह किसी का ज्ञान नहीं लेता क्योंकि वह स्वयं ज्ञान देने लग जाता है | दो-चार आदमी उसके पास आने लग गये तो फिर वह स्वयं शिक्षा देने लगता है, किसी की शिक्षा नहीं सुनता क्योंकि अब तो वह सिद्ध हो गया, अब उसे किसी की शिक्षा की आवश्यकता नहीं रही | इसीलिए श्रीबाबा ने उन सज्जन की बात सुनकर कुछ नहीं कहा क्योंकि सिद्धमूर्ति हैं, क्यों बिना मतलब इन्हें ज्ञान दिया जाये, ऐसे लोगों को उपदेश देना तो स्वयं भगवान् ने ही मना किया है, क्योंकि सही बात का सम्मान न होने पर अपराध लगता है, इसलिए सच्चे श्रृद्धालु व जिज्ञासु को ही सदुपदेश देना चाहिए | इधर कूरेशस्वामी जी ने अपनी स्त्री को शिक्षा दिया कि प्राण निकल जाएँ लेकिन प्रभु से कभी कामना नहीं करना | अरे, भोजन है, मिल गया तो संतुष्ट रहो न मिला तो भी संतुष्ट रहो, इसी प्रकार वस्त्र है, मिल गया अथवा न मिला, दोनों स्थिति में समान रहो, वस्तुतः ऐसा समचित्त बन जाना ही विशुद्ध भक्ति है |

(आगे का प्रसंग गोपी-गीत (२७/८/१९९४) से संकलित है) – रासलीला के अंतर्गत सौभाग्य मद हो जाने के कारण जब श्रीकृष्ण ब्रजगोपियों के बीच से अंतर्धान हो गये तो वे अपने प्राण प्रियतम के वियोग में बहुत अधिक रोयीं और फिर विरहावेश में उन्होंने एक गीत गाया, जिसे गोपी गीत कहते हैं | यह बहुत सुरीला गीत था | उस गीत के सुरीलेपन का क्या भाव था, इसकी चर्चा चल रही है | संगीत शास्त्र के नियमानुसार स्वर तो जब वैखरी वाणी में आता है तब वह नियम के अंतर्गत होता है | चार प्रकार की वाणियाँ होती हैं – परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी | सबसे पहली वाणी है - परावाणी | परावाणी ही आगे चलकर पश्यन्ती बनती है, वही मध्यमा बनती है और अंत में वही वैखरी बनती है | वस्तुतः ये चारों ही वाणियाँ हैं | गीत पीछे उत्पन्न होता है, जो मुख के द्वारा प्रकट होता है | गीत की रचना पहले परावाणी में होती है अर्थात् पहले भाव आते हैं, वे भाव जब सुन्दर होते हैं तो भगवान् को अच्छे लगते हैं और उसको सुस्वरता कहा जाता है | यदि भाव में सुन्दरता नहीं है तो कलापक्ष कितना भी सुन्दर है उसका कोई भी मूल्य नहीं है | ...क्रमशः

मुरलिका-हरण लीला

श्रीबाबा महाराज के 'श्रीराधासुधानिधि-सत्संग' (५/५/१९९८) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी मीराजी जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे –) वन विहार के समय राधारानी की आज्ञा से और उनको प्रसन्न करने के लिए श्यामसुन्दर एक कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर वहाँ से फूल तोड़-तोड़कर नीचे गिराने लगे और बड़े प्रसन्न हुए कि आज मुझे श्रीलाड़लीजी की सेवा मिली है | इतने में सखीजन आती हैं, श्रीराधारानी को देखकर के उनसे कहती हैं कि हे राधिके ! कैसा सुन्दर अवसर है, श्रीकृष्ण बहुत ऊपर वृक्ष पर हैं; देखो, इनकी यह वंशी हमारी सौत है, अतः इस वंशी को आप गायब कर दीजिये | श्रीजी ने पूछा – ऐसा क्यों ? सखियाँ - क्योंकि हम लोगों को यह वंशी बहुत कष्ट देती है | राधिकारानी - "देखो, सखियो ! चोरी नहीं करनी चाहिए | मैं राजकुमारी हूँ, महाराज वृषभानु की पुत्री हूँ, तुम लोग मुझे ऐसा क्यों सिखाती हो |" सब सखियाँ बोलीं - "देखो, श्रीलाड़लीजी ! आप राजकुमारी हैं; ठीक है, ये नंदनंदन भी तो ब्रजराज हैं, ब्रजराजा के बेटा हैं | ये तो रोज घर-घर चोरी करते हैं, माखन-मिश्री सब कुछ लूटते हैं; आपको तो हम केवल वंशी चुराने की बात कह रहीं हैं | हम ऐसा नहीं कह रहीं हैं कि आप माखन चुराओ | हे किशोरीजू ! वंशी चुराने में यह लाभ है कि जब श्यामसुन्दर की वंशी बजती है, उस समय हम लोगों को बड़ा कष्ट होता है | हमको ही नहीं; आपको भी कष्ट होता है | वंशी बुलाती है तो जाना पड़ता है | ये वंशी जादू भरी है, ये वंशी बड़ी दुःखदायिनी है; जब हम लोग रसोई करती हैं तब यह वंशी बजती है और इसकी मधुरामृतमयी ध्वनि के प्रभाव से लकड़ियाँ गीली हो जाती हैं, आँच (अग्नि) बुझ जाती है | हम दूध औटा (गरम) नहीं पाती हैं | ये वंशी बड़े-बड़े जादू दिखाती है, हमें नचाती है,यह तो आफत की पुड़िया है | इसीलिए हम लोगों को सुख देने के लिए आप इसकी चोरी कर लीजिये |" श्रीजी कहती हैं कि देखो, हे सखियो ! कितना भी कष्ट हो, हमको तो चोरी नहीं करनी चाहिए परन्तु सखियाँ कहतीं हैं कि नहीं, स्वामिनीजू ! सुनो – **"स्थाणुं ....|"** जब यह वंशी बजती है तो बड़े-बड़े सूखे ठूठ हरे-भरे हो जाते हैं, उनमें अंकुर फूटने लग जाता है | सूखी लकड़ियाँ गीली होने लग जाती हैं, अतः हम लोगों को तो बहुत कष्ट है कि हम लोग कैसे रसोई बनायेंगी ? अत्यंत वेगपूर्ण नदियों की धारा भी वंशी की मधुर ध्वनि सुनकर स्तम्भित हो जाती है | नदियों का जल बड़े वेग से बह रहा है, उधर से श्रीकृष्ण की वंशी ध्वनि सुनाई पड़ी तो नदियों का वेग रुक जाता है, नदियाँ भी वंशी का सुमधुर स्वर सुनने लग जाती हैं, ऐसी विचित्र वंशी है | गोपियों के इस प्रकार के वचन श्रवण करने के पश्चात् भी श्रीराधारानी खड़ी हुई हैं क्योंकि उनका विचार चोरी करने के पक्ष में नहीं हो रहा है | इस प्रकार श्रीजी को देखकर के तीसरी सखी ने कहा **–आभीरी दधिमंथनो ......|** हे राधे ! प्रभात बेला में जब हम दधि मथकर के माखन निकालने के लिए बैठती हैं, उसी समय वंशी की आवाज आती है तो हमारे हाथ-पाँव रुक जाते हैं, मथानी रुक जाती है और सारा मथा हुआ अधचला दही (आधा मथा हुआ) जम जाता है, मथानी चल नहीं पाती है तो माखन कैसे निकलेगा ? घरों में सास चिल्लाती है कि इतनी देर हो गयी, माखन निकालने के लिए बैठी है और अभी तक तूने माखन नहीं निकाला, इसलिए हम लोगों को कितना कष्ट है !! हे श्यामाजू ! दही की मटकी और दही तो छोड़ो, उस वंशी के कारण से रास्ते में जो पत्थर पड़े हुए हैं, वे भी पिघल जाते हैं | इस वंशी से हमें बड़ा ही कष्ट है | यह चारों ओर प्रेम की

शरीर को जब से हमने अपना घर मान लिया है.. तब से भगवान से अलग हैं।

ऐसी वर्षा कर देती है कि नव विवाहिता कुलवधू के नींवी-बंधन शिथिल हो जाते हैं और वे घर से निकल पड़ती हैं, ऐसी विचित्र वंशी-ध्वनि (रव) है –

बंसुरिया कौन गुमान भरी |
सोने की नाहीं रुपै की नाहीं, नाहिन रतन भरी ||
जाति-पाँति की आछी नाहीं, मधुवन की लकड़ी |
'सूरश्याम' याको कहा कहिये, मुँह लग कीन्ह अरी ||

सखियों की प्रार्थना व उनके सिखाने पर श्रीजी चल पड़ीं | सखियाँ श्रीजी से बोलीं कि जल्दी से आप बांसुरी को चुरा लो, इसमें आपका हित है, हम सबका हित है | श्रीजी ने श्यामसुन्दर की वंशी को चुराकर अपने आँचल में छिपा लिया | श्यामसुंदर कदम्ब वृक्ष से नीचे बिछे हुए वस्त्र पर फूलों को तोड़-तोड़कर फेंक रहे थे | उन्हीं फूलों के बीच में वंशी भी रखी थी | कदम्ब के पुष्पों से ढकी हुई मुरली को श्रीजी ने उठा लिया और समस्त पुष्पों को इधर-उधर फेंक दिया | जब कोई चोर कहीं चोरी करने जाता है तो सन्दूक देखकर उसमें से फटे हुए व्यर्थ के वस्त्रों को इधर-उधर फेंक देता है और तलाश करता है कि असली माल, आभूषण आदि कहाँ हैं ? यदि कोई पुस्तक आदि भी सन्दूक में होती है तो चोर उसे भी फेंक देता है; उसी प्रकार श्रीजी ने फूलों को तो इधर-उधर फेंक दिया और वंशी को उठा लिया | उधर श्यामसुन्दर कदम्ब वृक्ष पर काफी ऊंचाई पर चढ़े हुए थे, उन्हें नीचे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था क्योंकि नीचे बहुत-सी सघन कुँजें थीं, बहुत-सी फूलों की लताएँ थीं किन्तु उन्हें बहुत देर तक नीचे से सखियों की फुसफुसाहट सुनाई दी तो वह समझ गये कि मेरे विरुद्ध कोई षड्यंत्र (कुचक्र) रचा जा रहा है तो वह भी चौकन्ने हो गये और फूलों को तोड़ना रोककर ध्यान से देखने लग गये कि नीचे हो क्या रहा है ? बहुत देर से नीचे ये बातें क्यों हो रही हैं ? जब श्यामसुन्दर ने लताओं को हटाकर नीचे ध्यानपूर्वक चोरी से देखा क्योंकि वे तो महाचोर हैं, उन्होंने इस तरह से देखा कि कोई देख न ले और पता लगाया कि नीचे क्या बात हो रही है तो देखा कि श्रीजी वंशी को अपने आँचल से ढक रही हैं | वह समझ गये कि श्रीजी तो भोली-भाली हैं और इन सखियों ने ही यहाँ आकर इन्हें चोरी करने की सलाह दी है | "को न कुसंगत पाइ नसाई |" कुसंग से किसका नाश नहीं होता है | राधारानी कितनी भोली हैं और इन टेढ़ी सखियों ने ही यहाँ आकर सब काम गड़बड़ कर दिया | श्यामसुन्दर ऊपर से सब लीला देखते रहे और जब श्रीजी वंशी को लेकर चल पड़ीं तो वह समझ गये कि अब वंशी हाथ में नहीं आने वाली है, जल्दी से पेड़ से उतरना चाहिए | श्रीजी एक कुञ्ज में छिपने के लिए चली गयीं थीं, तभी श्रीकृष्ण सहसा वृक्ष से नीचे कूद पड़े और उसी कुञ्ज में जाकर श्रीजी का रास्ता रोक लिया तथा कहने लगे कि यह कौन है जिसने मेरी मणिमय वंशी को उठा लिया व मेरे पीले पटके को फेंक दिया | सखियों ने श्रीजी से कहा था कि आप केवल वंशी को चुराना और कुछ मत चुराना क्योंकि यह वंशी ही हत्या की जड़ है और थोड़ी देर बाद वंशी हम लोगों को दे देना फिर हमारे हाथ से वंशी कभी भी श्रीकृष्ण को नहीं मिल सकती | जैसे एक खूँटैल होता है, जो चोरों का सरदार होता है | चोर लोग सारा सामान चुराकर खूँटैल को दे देते हैं | सारा काम खूँटैल करता है, चोर कुछ नहीं करता है | चोर द्वारा चुराए गये माल का उपभोग करने की, उसको अपने पास सुरक्षित रखने की अथवा बेचने की जिम्मेदारी खूँटैल की होती है | सखियों ने श्रीजी से कहा था कि खूँटैल तो हम लोग हैं, आप तो केवल वंशी को चुराकर उस कुञ्ज के आगे हम लोगों को दे देना | यहाँ गाँव की सीमा है, इसके आगे कोई बात नहीं है किन्तु श्रीकृष्ण तो महा खूँटैल थे, उन्होंने समझ लिया कि गाँव की सीमा पर ही माल गायब हो जायेगा तो फिर कभी नहीं मिलेगा | इसीलिए वह वृक्ष से कूद पड़े और उस कुञ्ज के आगे खड़े हो गये, जिससे कुञ्ज के आगे श्रीजी जा ही नहीं पायीं |

...क्रमशः

भक्ति-दीप 'ज्योतिपंतजी'

श्रीबाबामहाराज के एकादशी-सत्संग (८/१/२०० ९) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी कृष्णप्रिया जी, मानमन्दिर, बरसाना

पूज्यश्री बाबा महाराज ने एकादशी के दिन मानमन्दिर के रासेश्वरी-विद्यालय के बच्चों एवं ब्रजवासियों व श्रोतागणों को संबोधित किया –

(श्रीबाबा महाराज के शब्दों में) -

आज विद्यालय के सभी बालक हमारे सामने उपस्थित हैं, इसलिए हम आज कथा एक बालक की सुनाते हैं क्योंकि वह बच्चों के काम (कल्याण) की है | सबको पता होना चाहिए कि अब बरसाने के विद्यालय में भी प्रह्लाद सभा शुरू हो गई है | (आपकी जानकारी के लिए बता दें कि मानमंदिर से प्रकाशित पुस्तक जिसका नाम 'प्रह्लाद सभा' है, इस पुस्तक में महापुरुषों जैसे - सूरदासजी, तुलसीदासजी, मीराबाईजी, कबीरदासजी आदि के पद हैं) कुछ दिन पहले बुद्धसेन विद्यालय, बरसाना के प्रधानाचार्य और वहाँ के विद्यालय के छात्र मानमन्दिर आये थे और जाते समय मानमन्दिर से प्रकाशित पुस्तक प्रह्लाद सभा भी ले गये | उन्होंने अपने विद्यालय में प्रह्लाद सभा कार्यक्रम शुरू कर दिया है क्योंकि सभी ने प्रतिज्ञा किया था | मानमन्दिर के विद्यालय 'रासेश्वरी विद्या मन्दिर' ने प्रह्लाद सभा के रूप में अत्यधिक प्रशंसनीय जनकल्याणकारी काम शुरू किया है, उसका समाज पर विलक्षण प्रभाव पड़ रहा है | गिड़ोह गाँव के ब्रजवासियों ने बताया कि वहाँ के विद्यालय में भी 'प्रह्लाद सभा' का पदगान होता है; अनेक विद्यालयों में यह प्रथा चल पड़ी है | वस्तुतः जिन विद्यालयों में भगवान् की भक्ति नहीं सिखायी जाती, वे विद्यालय 'वास्तविक विद्यालय' नहीं हैं | काकभुशुण्डिजी ने कहा था – "खरी सेव सुर धेनुहि त्यागी" अर्थात् जिस व्यक्ति में भक्ति नहीं है, वह तो गधी का दूध पीता है | सुरधेनु (कामधेनु गाय) का दूध तो वही पीता है, जिसमें भक्ति है | जिन विद्यालयों में भक्ति नहीं सिखायी जाती, वे चाहे कितने ऊँचे विद्यालय हैं, बड़ी बिल्डिंग है, पैसा है परन्तु वे विद्यार्थियों को गधी का दूध पिला रहे हैं | यह कथन काकभुशुण्डिजी ने कहा था, इसीलिए ब्रज में 'मानमन्दिर सेवा संस्थान' द्वारा जगह-जगह ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है कि भौतिक शिक्षा रूपी गधी का दूध पीने वाले समाज को कामधेनु के दूध (भक्ति) का वितरण किया जा सके | अभी हम कुछ दिन पहले 'होडल' गये थे, वहाँ मानमन्दिर की ओर से एक प्रभात-फेरी सम्मेलन था | मानमन्दिर की ओर से यह प्रयास किया जा रहा है कि ब्रज के गाँव-गाँव में भक्ति फैले, इसी तारतम्य में जगह-जगह प्रभात फेरी सम्मलेन किये जा रहे हैं | होडल में भी दो प्रभात फेरियाँ चल पड़ी हैं, वहाँ के लोगों में बड़ी जाग्रति आयी है | हम चाहते हैं कि ब्रजमंडल में जितने विद्यालय हैं, सभी विद्यालयों में सबसे पहले जो प्रार्थना होती है वह प्रह्लाद सभा (नित्य किसी एक महापुरुष के पद को सभी बच्चों द्वारा बोलना एवं उसका अर्थ बताया जाना) अर्थात् 'भक्तिमय पदगान' से शुरू हो, नहीं तो सभी स्कूलों के बच्चे केवल गधी का दूध पीते हैं | कामधेनु गाय का दूध तो केवल भगवान् की भक्ति ही है; धीरे-धीरे यह सच्ची बात अनजान लोगों तक पहुँच रही है | इसीलिए 'श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान' द्वारा सम्पूर्ण ब्रजमण्डल व देश-विदेश में भी प्रभात फेरी सम्मेलनों का आयोजन 'कथा-कीर्तन' के माध्यम से किया जा रहा है | भगवान् की भक्ति से ही संसार का कल्याण सम्भव है, नहीं तो सब लोग भक्ति के बिना मुर्दे हैं, निशाचर हैं | हम तो चाहते हैं कि ब्रज में क्या, भारतवर्ष में कोई भी गाँव ऐसा न बचे, जहाँ भगवन्नाम की फेरी न चलती हो | भारत के लाखों गाँवों में भगवन्नाम की फेरी चलनी चाहिए, जिससे संसार का कल्याण हो, इसीलिए अनेक

स्थानों पर प्रभात फेरी सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है | राधारानी वार्षिक ब्रजयात्रा, जो कि मानमन्दिर द्वारा संचालित ब्रज ८४ कोस की निःशुल्क यात्रा है, जिसमें बंगाल, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, बिहार आदि भारत के विभिन्न प्रदेशों से लोग आते हैं | मानमन्दिर की प्रेरणा से इन प्रान्तों में भी प्रभात फेरी शुरू हो गयी है | कलियुग में भगवन्नाम ही एकमात्र सहारा है | हम देख रहे हैं कि हिन्दू-संस्कृति का नाश हो रहा है | ऐसे भयंकर समय में हिन्दू-बालकों में भक्ति के संस्कार जागृत हों, इसलिए एक भक्त बालक की कथा सुना रहे हैं -

भक्त बालक ज्योतिपंतजी की कथा

एक बालक था, उसका नाम था ज्योतिपंत; ये सच्ची घटना है | महाराष्ट्र के सतारा जिले में बिटे नाम का एक गाँव है, वहाँ ज्योतिपन्त के माता-पिता रहते थे, उन्होंने अपने बच्चे को पढ़ाने के लिए बहुत प्रयास किया लेकिन ये (ज्योतिपंत) बुद्धिहीन थे, कुछ नहीं पढ़ पाये तो माँ-बाप बहुत दुःखी हुए, वे सम्पन्न परिवार के थे | ज्योतिपन्त के मामा महीपति-पेशवा (दक्षिण भारत में राजा को पेशवा कहा जाता था) के प्रधान मुनीम थे, इसलिए सुख-सम्पत्ति से सम्पन्न बहुत बड़ा इनका घर था | माँ-बाप ने देखा कि हमारा बालक तो पागल ही है, वह कुछ भी नहीं पढ़ा है, २० साल का हो गया और ऐसे ही घूमता रहता है, तो गुस्से में एक दिन पिता ने निकाल दिया कि इस घर से निकल जा | जब पिता ने निकाल दिया तो भगवान् की विचित्र लीला है, वह बालक घर से जंगल में चला गया | जिसके अन्दर थोड़ी-सी भी भक्ति है, वह भक्ति रूपी नाव भवसागर से पार कर देती है | देखो, बच्चो ! तुम लोग ये बात अच्छी तरह से समझो | ज्योतिपन्त थे तो पागल से लेकिन इतना जानते थे कि अगर भगवान् को बुलाया जाए तो वे सुनते अवश्य हैं, इतना उनको विश्वासपूर्वक 'दृढ़ ज्ञान' था और कुछ नहीं जानते थे; वह अकेले वन में चले गये, वहाँ श्रीगणेशजी का मन्दिर था (महाराष्ट्र में गणपति बाबा की बहुत उपासना चलती है), वहाँ जाकर वह रोने लग गये और रोते-रोते बोले – "हे गणपति बाबा ! मेरे माँ-बाप ने मुझे घर से निकाल दिया है, अब मैं दुनिया में कहाँ जाऊँ ? अब तो मैं तेरे दरवाजे ही मरूँगा |" ६ दिन तक वह मन्दिर में भूखे-प्यासे रहकर गणेशजी को अपनी विनती सुनाने लगे -

मैं हूँ अनाथ बालक, मुझ पर दया दिखा दे ||
मेरे पिता ने घर से एकदम मुझे निकाला;
मैं ऐसा हूँ अभागा, किस्मत का हूँ मैं काला;
आया तेरी शरण में, मुझ पर कृपा दिखा दे |
मैं हूँ अनाथ बालक ....||

संसार के सभी सहारों को छोड़कर वह भगवान् को बुला रहे हैं – **इतना बड़ा हुआ हूँ, मैं २० साल का हूँ;**
पढ़ पाया कुछ नहीं मैं, बुद्धि से हीन मैं हूँ;
जाऊँगा अब नहीं मैं, अपना मुझे बना ले |
मैं हूँ अनाथ बालक...............................||

ज्योतिपन्त बोले – "हे नाथ ! मैं यहीं मर जाऊँगा लेकिन तेरा दर नहीं छोड़ूँगा |" आखिर में छठवें दिन भी कुछ खाया-पिया नहीं, ऐसा लगा मानो प्राण चले जायेंगे, उन्होंने कहा - हे नाथ !

मर जाऊँगा यहीं मैं, भूखा तड़प-तड़प कर;
तू ही अनाथ का है, आया हूँ तेरे दर पर;
इस दीन को दयालु, अपना दरस दिखा दे |
मैं हूँ अनाथ ....||

६ दिन-रात बीत गये और मरने की हालत आ गयी | सातवें दिन उस प्रतिमा में से साक्षात् प्रकट होकर के गणेशजी ने दर्शन दिया | गणेश भगवान् का स्वरूप देखकर के ज्योतिपंत रोने लग गये (इनका नाम तो ज्योतिपंत था लेकिन बुद्धि में अँधेरा था) | कृपादृष्टिपूर्वक श्रीगणेशजी बोले – "हे बालक ! तू अपना मुँह खोल |"

ज्योतिपंत ने मुँह खोला तो गणेशजी ने उसकी जीभ पर 'ॐ' लिख दिया, ऐसा करते ही ज्योतिपंत को सारी विद्या प्राप्त हो गयी और स्वप्न में महादेवजी ने दर्शन दिया; इसके बाद ज्योतिपंतजी घर लौटे, भगवान् की कृपा होने से उनका चेहरा बड़ा सुन्दर हो गया तथा मुख पर दिव्य तेज छा रहा था; जब वह घर लौटे तो वहाँ पर इनके मामा महीपतिजी आये थे जो पेशवा के प्रधान और सबसे बड़े मुनीम थे | इधर, इनके माँ-बाप भी दुःखी थे कि हमारा बेटा कहाँ चला गया ? इनके (ज्योतिपंत के) पिता से इनकी माँ कहती थी कि तुमने क्यों बच्चे को निकाल दिया, अगर उसे नहीं पढ़ना था तो नहीं पढ़ता, अब पता नहीं कहाँ भूखा मर रहा होगा ? (कितना भी खराब बेटा हो, माँ को तो अच्छा ही लगता है) इनकी माँ अपने पति से लगातार पुत्र-वियोग में दुःखित होकर कहती रही कि ऐसी पढ़ाई किस काम की जो लड़के का जीवन खत्म कर दे, तुमने उसे व्यर्थ ही निकाल दिया, अरे, दो रोटी खाता, घर पर ही बना रहता, अब न जाने मर गया होगा या जीवित होगा, कुछ भी पता नहीं है | इस प्रकार ज्योतिपंत की माँ रो रही थी, इसलिए उसको समझाने के लिए इनके मामा आये थे | वह समझा रहे थे कि बहन, धीरज रख, ज्योतिपंत मरा तो नहीं होगा, मेरा विश्वास है कि वह आयेगा | २० साल का लड़का है, इतनी जल्दी कैसे मर जायेगा | इस प्रकार से ज्योतिपंत की रोती हुई माँ को उसके भाई समझा रहे थे | सभी लोग ज्योतिपंत की माँ को समझा रहे थे कि उतने में किसी ने दरवाजा खटखटाया | माँ बोली - 'कौन है ?' ज्योतिपंत - 'माँ, मैं ज्योति हूँ |' माँ- 'अरे ! बेटा आ गया |' उन्होंने दौड़कर के किवाड़ खोला और ज्योतिपंत से लिपट गई | माँ - 'अरे, आ गया, मेरा बेटा आ गया |' मामा भी आश्चर्य करने लग गये और बोले - 'अरे ! इसका तो चेहरा ही बदल गया | सात दिन में क्या हो गया ?' तब तक ज्योतिपंत बोले (जिस प्रकार कोई बड़ा शिक्षित व्यक्ति बोलता है) – 'मामाजी ! प्रणाम' मामाजी सोचने लगे कि 'अरे ! ये तो पागल था, ये क्या, इस पागल में परिवर्तन कैसे आ गया ?' फिर उन्होंने पूछा- 'बेटा, तुम जीवित हो ?' ज्योतिपंत - 'हाँ, भगवान् की कृपा होती है तो मनुष्य का जीवन कभी नष्ट नहीं होता |' मामाजी सोचने लगे - 'ओ हो !.. इस पागल को क्या हो गया, ये तो बड़े ज्ञान की बातें कर रहा है |' ज्योतिपंत की बातें सुनकर सब चक्कर में पड़ गये | ज्योतिपंतजी के पिता भी आश्चर्यचकित होकर बोले - 'बेटा, भगवान् की कृपा से ही तुम बच गये |' ज्योतिपंत – 'हाँ पिताजी |' अब तो वह मंत्र बोलने लग गए, उन्होंने कहा – 'उपनिषद में एक मंत्र है –

भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः –
भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चम ||

(तैत्तिरीयोपनिषद् २/८)

भगवान् के भय से ही सारा संसार चल रहा है | उस भगवान् की कृपा के ही डर से सूर्य चलता है, चन्द्रमा चलता है, वायु चलती है और मौत भी डरती है |' जब ज्योतिपंत ने यह वेद मंत्र बोला तो सबके होश गुम हो गए | पिताजी सोचने लगे - 'अरे, बाप रे बाप ! ७ दिन में ये कैसा चमत्कार हो गया, हमारा पागल बेटा तो अब वेद मंत्र बोलता है |' माँ भी अपने बेटे के घर आने और उसके विलक्षण ज्ञान को देखकर उससे लिपट के रोने लग गई | माँ बोली – 'अरे ज्योति, तुझको ये ज्ञान कहाँ से मिल गया ?' मामा महीपति भी बोले- 'अरे भांजे, तू इतनी जल्दी ६ दिन में वेद कैसे पढ़ गया, ऐसा अद्भुत परिवर्तन तुझमें कैसे हो गया ? ज्योतिपंत ने पढ़े-लिखे प्रतिभाशाली की तरह जवाब दिया (अन्यथा पहले तो वह पागलों की भाषा में बोलता था), उसने कहा – "मामा जी ! मुझको घर से निकाल दिया गया तो मैं जंगल में चला गया | वहाँ जंगल में गणेशजी का एक मन्दिर था, वहाँ जाकर मैंने गणेशजी से कहा कि अब तो मैं आपके ही द्वार पर मरूँगा | मेरा संसार में कोई नहीं है, न मेरी माँ है, न मेरा बाप है | जो कुछ है वह आप ही हैं | फिर मैं भूखा-प्यासा मन्दिर में ही पड़ा रहा | ६दिन-६रात इसी तरह बीत गये तो मैं बेहोश हो गया | आदमी खायेगा-पियेगा नहीं तो बेहोश हो ही जायेगा |

अचानक मैंने देखा कि मन्दिर में बहुत दिव्य प्रकाश हुआ और सामने गणेशजी खड़े हैं |" गणेशजी ने पूछा - "अच्छा बेटा ! तू क्या चाहता है ?" मैंने कहा – "मुझे माँ-बाप ने घर से निकाल दिया है, मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ | कृपा करके आप मुझे बुद्धि दें, ज्ञान दें |" श्रीगणेशजी ने कहा कि मुँह खोल, तो मैंने मुँह खोल दिया तब उन्होंने मेरी जीभ पर 'ॐ' लिख दिया और उसके बाद से मुझको सभी वेद, शास्त्रों का ज्ञान अपने आप हो गया | महीपतिजी बोले - "वेद-शास्त्र का ज्ञान तो हो गया लेकिन कुछ दुनिया की पढ़ाई का भी ज्ञान हुआ कि नहीं ?" (सांसारिक व्यक्ति तो यही चाहता है | अभी तुम घर में जाकर अपने माता-पिता से कहो कि हम तो 'राम-राम' की पढ़ाई जानते हैं तो तुम्हारे पिताजी कहेंगे - अरे, अंग्रेजी में कितने नम्बर आए | राम-राम तो करता है, कहीं गणित में तो नहीं फेल हो गया | संसारी माँ-बाप तो यही कहेंगे |) ज्योतिपंतजी ने कहा कि संसार की ऐसी कोई पढ़ाई नहीं है कि जिसमें मैं फेल हो जाऊँ | मामाजी बोले - "अच्छा चलो, तुम हमारा काम कर दो तब हम तुम्हारी बात पर विश्वास कर सकते हैं |" राजा का काम था, 'महीनों का हिसाब-बही खाता' उन्हें अकेले ही देखना पड़ता था क्योंकि केवल यही ईमानदार थे | अकेले होने के कारण इन्होंने सोचा था कि हिसाब-किताब में कई महीने लगेंगे | इन्होंने सोचा था कि इतना बड़ा काम अकेले कैसे हो पायेगा ? रात-दिन भी करेंगे तो भी महीनों लगेंगे | अतः महीपति मामा ने ज्योतिपंत से कहा - "बेटा, ये हमारा हिसाब-किताब का महीनों का कार्य है, क्या तुम इसमें १०-२० दिन तक मदद कर सकते हो ?" ज्योतिपंतजी - "हाँ, आप सभी कमरे से बाहर चले जाइये और किवाड़ बन्द कर दीजिये, थोड़ी देर बाद आइयेगा |" सब लोग बाहर चले गये तथा किवाड़ बन्द कर दिया | ज्योतिपंतजी ने गणेशजी को याद किया और बोले - "हे नाथ ! आपने ही मुझे विद्या-बुद्धि प्रदान की है, अतः इस काम में भी मेरी मदद करें |" ऐसा कहकर के उन्होंने कलम उठाया और थोड़ी देर में ही सब हिसाब बराबर कर दिया | थोड़ी देर बाद लोगों ने किवाड़ खोला | ज्योतिपंतजी - "लो मामाजी !" मामाजी ने देखकर के सोचा - ओहो...!! महीनों का काम और अक्षर इतने सुन्दर हैं कि कोई दुनिया में ऐसा लिख नहीं सकता | मामाजी, पेशवा साहब के पास गए और साथ में ज्योतिपंतजी को भी ले गए | अब तो इनकी पाग बँध रही थी और बढ़िया पटुका भी धारण किया था | दूर से ही राजा साहब ने इन्हें देखा और सोचा - "अरे ! ये महीपतिजी तो पागल को भी साथ में ला रहे हैं, आज तो इस पगले को भी पटुका पहना रखा है |" राजा को क्या पता कि अब यह पागल नहीं रहा | मामाजी - "पेशवा साहब !" पेशवा - "महीपतिजी ! आप राज दरबार में आ गए लेकिन हमारा जो महीनों का काम था, उसका क्या हुआ ?" मामाजी - "मैं क्या करूँगा, मेरे भाँजे ने कर दिया है |" राजा ने देखा कि ये तो वही पागल है | पेशवा - "अच्छा |" मामाजी - "हाँ, इन्हीं ने ये काम किया है, ये ज्योतिपंतजी हैं, (इनके नाम के साथ 'जी' लगाया, नहीं तो पहले ज्योति-ज्योति चिल्लाते थे) इन्हीं ने यह काम किया है, ये देखिए – 'अक्षर' |" राजा ने आश्चर्य से देखा कि सभी 'अक्षर' सुनहले बने हैं | पेशवा (राजा) ने तुरंत ज्योतिपंतजी को पुरंदर किला का अधिकारी बना दिया | कहाँ तो पागल थे और कहाँ ७ दिन के भजन के बाद ८वें दिन राजा के दरबार में गए और पुरंदर किला के मालिक बन गए | देखो, भजन ऐसी महत्त्वपूर्ण चीज होती है | ज्योतिपंतजी ने पुरन्दर किला में कुछ दिन तक काम किया, उसके बाद एक दिन महादेवजी ने स्वप्न में इनसे कहा कि अब तुम काशी चले जाओ और वहाँ तप करो क्योंकि भगवान् की भक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण है | महादेवजी की आज्ञा से ज्योतिपंतजी काशी चले गए और ६ महीने तक वहाँ तपस्या किया | वहाँ भागवत के रचयिता व्यासजी प्रकट हुए और उन्होंने ज्योतिपंतजी के हाथ में भागवत प्रदान की और कहा कि तुम इसका मराठी भाषा में अनुवाद करो | (महाराष्ट्र में मराठी भाषा बोली जाती है |) व्यासदेवजी की कृपा से ज्योतिपंतजी को कृष्णभक्ति भी प्राप्त हो गई, इन्होंने मराठी भाषा में छंदों में भागवतजी की टीका लिखी है, जो आजकल प्राप्त नहीं है लेकिन ज्योतिपंतजी का नाम आज भी महाराष्ट्र में अमर है | यह कथा सच्ची है और इससे यह शिक्षा मिलती है कि जो भी बालक-बालिका भजन करते हैं, उसको भक्ति और भगवान् की कृपा अवश्य मिलती है |

यदि भगवान् की भक्ति नहीं है तो हमारा सिर मनुष्य का नहीं है, मुर्दे का सिर है,.. चाहे राजा है उसके सिर पर राजमुकुट बंधा हुआ है.............................. लेकिन वह मुर्दे का सिर है ।

सुविजय-सूचिका 'गौमाता'

श्रीबाबा महाराज के सत्संग 'गौ-महिमा' (१२/८/२०१२) से संग्रहीत
संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी चंद्रमुखी जी, मानमन्दिर, बरसाना

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः । अलुब्धैर्दानशीलैश्चसप्तभिर्धार्यते मही

(स्कन्दपुराण- ४/२/१०)

शास्त्र के अनुसार गायों, ब्राह्मणों, वेदों, सती स्त्रियों, सत्यवादी पुरुषों, त्यागियों तथा दानियों के कारण पृथ्वी टिकी हुई है | कोई कहे कि आजकल ब्राह्मण लोग वेदज्ञ नहीं रहे, स्त्रियाँ सती नहीं हैं क्योंकि कलियुग है | ऐसा नहीं है, इनमे कमी अवश्य आ गयी है लेकिन अभी भी कुछ अंश में ये सभी चीजें हैं, इसीलिए ये पृथ्वी रुकी हुई है | इसका प्रमाण महाभारत में है कि पांडव लोग जुए में राज-पाट, द्रौपदी तथा अपने-आप को भी हार गये थे लेकिन वे फिर से जीते, उसका कारण था उनकी गौ भक्ति, भगवान् की भक्ति और ब्राह्मणों की भक्ति | १२ वर्ष तक पांडवों ने जंगल में कष्ट उठाये | कौरवों के साथ जुआ खेलते समय यह शर्त थी कि जो हारेगा उसको १२ वर्ष तक जंगल में रहना पड़ेगा तथा एक वर्ष तक अज्ञातवास करना पड़ेगा | अज्ञातवास में छिपकर के रहना है, अगर पता पड़ गया तो फिर से १२ वर्ष जंगल में रहना पड़ेगा | जो युद्ध महाभारत में हुआ था, उसमें बड़े-बड़े योद्धाओं से अर्जुन को १८ दिन तक लड़ना पड़ा | १८ दिन तक महाभारत का युद्ध हुआ, उसके बाद निर्णय हुआ लेकिन जो सफलता अर्जुन ने १८ दिन में पाई थी, वही सफलता जब गायों के लिए अर्जुन लड़े तो एक ही दिन में उन्होंने सभी महारथियों को जीत कर के पा ली थी | ये महाभारत की घटना है | अज्ञातवास करते समय जब पांडवों का कुछ भी पता नहीं लग रहा था तो दुर्योधन ने भीष्मपितामह से पूछा कि दादा जी ! पांडव कहाँ छिपे हैं ? आपको मालूम होगा, आप उनका पक्ष कर रहे हैं | भीष्म

पितामह ने कहा कि मैं कभी असत्य नहीं बोलता हूँ | तुमको तो पता ही है कि मेरा नाम भीष्म इसलिए पड़ा है कि मैं अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहता हूँ | भीष्म माने भयंकर, मैंने अखण्ड ब्रह्मचर्य की, विवाह न करने की भयंकर प्रतिज्ञा की, इसलिए मेरा नाम भीष्म पड़ गया | पहले मेरा नाम देवव्रत था लेकिन जिस दिन मैंने दाश्वराज के यहाँ प्रतिज्ञा किया, उसने मेरे पिता शांतनु से कहा था कि तुम गद्दी नहीं लोगे तो तुम्हारा बेटा लेगा | पिताजी ने कहा कि मेरा बेटा राजगद्दी नहीं लेगा, मैं उसको मना कर दूँगा | दाश्वराज - "अरे ! पिता की उम्र थोड़ी होती है और तुम्हारे मरने के बाद तुम्हारा पुत्र मनमाना करेगा | तुम्हारे बेटों में और सत्यवती के बेटों में लड़ाई होगी |" वहाँ पर उपस्थित भीष्म ने कहा - "लड़ाई नहीं होगी |" दाश्वराज - "राज्य का लोभ किसको नहीं है | तुम्हारे जाने के बाद, अगली पीढ़ी जो आयेगी, वह युद्ध करेगी |" भीष्म - "तुम अपनी बेटी का विवाह हमारे पिता शांतनु के साथ कर दो, मैं विवाह ही नहीं करूँगा | जब विवाह ही नहीं करूँगा तो लड़की-लड़का कहाँ से होंगे ?" भीष्म नदी के किनारे हाथ में जल लेकर के खड़े हो गए और आकाश के देवताओं को साक्षी बनाकर के बोले - "हे देवगणों ! देवव्रत प्रतिज्ञा करता है कि यह विवाह नहीं करेगा और जीवन भर ब्रह्मचर्य से रहेगा |" (जब विवाह नहीं करेंगे तो बच्चे कहाँ से होंगे ?) इस बात को सुनकर के देवता लोग पुष्प-वर्षा करने लग गये और उन्होंने कहा - "धन्य हो, धन्य हो, तुम्हारा नाम भीष्म है | ऐसी भयानक प्रतिज्ञा कौन कर

सकता है ? तुमने अपने पिता के लिए जो त्याग किया, गद्दी छोड़ा, ग्रहस्थ छोड़ा, विवाह नहीं किया, ऐसा पितृभक्त कोई नहीं हुआ, इसलिए तुम्हारा नाम 'भीष्म' हुआ |" भीष्म दुर्योधन से बोले - "दुर्योधन, तू जानता है कि मैं झूठ नहीं बोलता हूँ | तू ही नहीं बल्कि सारा संसार जानता है | पृथ्वी ही नहीं देवता भी जानते हैं कि भीष्म झूठ नहीं बोलता है, मुझे पता नहीं है कि पांडव कहाँ हैं ?" दुर्योधन समझ गया कि दादाजी झूठ नहीं बोलते हैं | इस बात को तीनों लोक जानते हैं, देवता भी जानते हैं | दुर्योधन ने कहा कि आप अंदाज से बता सकते हैं | हम पांडवों को कैसे ढूढ़ें क्योंकि १ वर्ष पूरा होने वाला है | १०-२० दिनों में अगर खोज लिया तो ठीक है नहीं तो वे अपना राज्य लेने के लिए आ जायेंगे | भीष्म ने कहा - "हाँ, मैं अंदाज से बता सकता हूँ |"

गावश्च बहुलास्तत्र न कृशा न च दुर्बलाः ।
पयांसि दधिसर्पींषि रसवन्ति हितानि च ॥

(महाभारत, विराटपर्व. २८/२२)

जहाँ भगवान् के भक्त रहते हैं, वहाँ गायें बढ़तीं हैं और पुष्ट होती हैं, दुबली-पतली नहीं होतीं |" (जब से मानमन्दिर पर आराधना शुरू हुई, भक्ति बढ़ी तो उसी के प्रभाव से बिना कोशिश के ही 'माताजी गौशाला' की संवृद्धि होने लगी | आज 'माताजी गौशाला' में ५५००० से अधिक गौवंश मातृवत् पल रहा है, इस समय सम्पूर्ण विश्व में इतनी गायें एक साथ कहीं भी नहीं हैं |) यह जो भीष्मपितामह ने वचन कहे, यह कलियुग में भी सत्य हैं लेकिन यह सत्य तभी होगा जब विशुद्ध भक्ति होगी | आजकल लोगों ने धर्म को व्यापार बना लिया है | दुनिया में कहीं भी कथायें हो रही हैं, वे केवल व्यापार के लिए हो रहीं हैं | भागवत में लिखा है –

धर्मस्य ह्यापवर्ग्यस्य नार्थोऽर्थायोपकल्पते ।
नार्थस्य धर्मैकान्तस्य कामो लाभाय हि स्मृतः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/२/९)

धर्म, पैसे के लिए नहीं है | आज सब चीजें बिक रहीं हैं, जैसे - कथा, कीर्तन, रास, सेवा-पूजा इत्यादि | मन्दिरों में पैसे वालों को ही प्रधानता मिलती है, पैसे वालों को ही सबसे आगे किया जाता है, ये गलत है | भगवान् का नाम दीनबन्धु है, दीनानाथ है, जो गरीब भक्त हैं, उनका ज्यादा सम्मान करना चाहिए लेकिन हर मन्दिर में जो धनी दाता है, उसी का सम्मान होता है | भागवत में जो बातें कहीं गयीं, उनका पालन नहीं हो रहा है | धर्म, संसार से छूटने के लिए किया जाता है | पैसे के लिए धर्म नहीं करना चाहिए | अगर पैसा आ गया तो उसको धर्म में लगा दो, अपनी कामनाओं में, भोगों में नहीं लगाओ | अगर कामना करनी है तो –

कामस्य नेन्द्रियप्रीतिर्लाभो जीवेत यावता ।
जीवस्य तत्त्वजिज्ञासा नार्थो यश्चेह कर्मभिः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/२/१०)

अपनी इन्द्रियों की प्रसन्नता के लिए कामना नहीं करो | ब्रज में और भी अनेक गौशालाएं हैं लेकिन उन गौशालाओं की ऐसी वृद्धि नहीं हुई जैसी कि माताजी गौशाला की हुई है क्योंकि उनका लक्ष्य अर्थ (धन आदि) था | गौशालाओं का पैसा लोग खा जाते हैं, इसलिए वहाँ कोई वृद्धि नहीं है, वहाँ धर्म मोक्ष के लिए न होकर के पैसे के लिए है; चंदा-चिट्ठा किया जाता है कि कैसे पैसा आवे |

अस्तु, जब भीष्म पितामह ने कौरवों को अनुमान के आधार पर बताया कि पाण्डव वहाँ हो सकते हैं जहाँ गायों की वृद्धि हो रही हो तो कौरवों की आँखें खुल गईं | उन्होंने एक सभा किया, गुप्तचर भेजे यह पता लगाने के लिए कि भारतवर्ष में सबसे ज्यादा गायें कहाँ हैं ? जहाँ गायें बढ़ी होंगी, वहीं पांडव होगें | सभा में पता पड़ा कि विराट नगर,

जिसको मत्स्य देश कहते हैं, वहाँ गायें बहुत बढ़ गयीं हैं | गुप्तचरों ने कहा – "हमने पाँचाल ('पंजाब' द्रौपदी जहाँ की रहने वाली है) में भी द्रौपदी और पांडवों का पता लगाया किन्तु वे वहाँ भी नहीं हैं | हम द्वारका भी हो आये, पांडव वहाँ भी नहीं मिले, न द्रौपदी मिली किन्तु विराट नगर में २ बातें ऐसी हैं जो बताती हैं कि वहाँ पांडव हैं | पहला तो यह कि वहाँ गौवंश इतना बढ़ा है कि सारे भारत में इतना गोधन नहीं है, जितना कि विराट नगर में बढ़ा है | दूसरी बात यह है कि कीचक, जिसमें १० हजार हाथियों की ताकत थी, उसको वहाँ किसी ने मार डाला |" कीचक को भीमसेन ने मारा था | कैसे मारा था ? द्रौपदी बहुत सुन्दर थी और कीचक की दृष्टि उसके प्रति गलत थी | वह द्रौपदी को भोगना चाहता था | 'द्रौपदी' विराट नगर की महारानी के यहाँ नौकरानी बनकर, वेश बदलकर के रहती थी लेकिन सुन्दरता छिपती नहीं है | तुम भले ही फटे कपड़े पहन लो, सुन्दरता छिपेगी नहीं और जो सुंदर नहीं है, वह भले ही कितना भी क्रीम-पाउडर लगा ले, वह तो काला-कलूटा ही रहेगा | कीचक की बहन का विवाह विराट नगर के राजा के साथ हुआ था | विराट नगर में कीचक के डर से कोई जाता नहीं था, उसमें भीमसेन के समान ताकत थी | दुनिया के सारे लोग जानते थे कि विराट नगर में गोधन सबसे ज्यादा है लेकिन कीचक वहाँ रहता था, इसलिए कोई वहाँ पाँव नहीं देता था | कीचक की बहन अर्थात् विराट नरेश की स्त्री अपने भाई की शक्ति के कारण उससे दबती थी क्योंकि वह जानती थी कि मेरे भाई के कारण हमारा राज्य बचा हुआ है | एक बार कीचक ने अपनी बहन से कहा - "आज रात अपनी दासी (सैरन्ध्री) को मेरे पास भेज देना | हमारी नाट्यशाला में एकांत है |" बहन भयवश कुछ नहीं बोली क्योंकि जानती थी कि इसी के कारण हमारा राज्य टिका हुआ है | उसने अपने भाई से कहा – "भैया ! एक बार अच्छी तरह से सोच लो |" कीचक बोला – "हाँ, मैंने सोच लिया है |" कीचक की बहन ने द्रौपदी से कहा - "सैरन्ध्री ! यह मदिरा का पात्र ले जाकर तुम मेरे भाई कीचक को दे आओ |" द्रौपदी समझ गयी क्योंकि हर मनुष्य दूसरे की दृष्टि को समझता है | द्रौपदी की ओर कीचक आसक्ति के साथ घूर-घूर कर देखता था, हर स्त्री समझ जाती है कि मुझे इतना देखा इसलिए जा रहा है क्योंकि इस पुरुष की मेरे रूप में आसक्ति है | द्रौपदी ने विराट नरेश की रानी से स्पष्ट मना करते हुए कहा - "कीचक पवित्र आदमी नहीं है, उसकी दृष्टि में वासना दिखाई पड़ती है इसलिए मैं उसके पास नहीं जाऊँगी |" रानी बोली - "तुम्हें जाना पड़ेगा क्योंकि तुम मेरी दासी हो और एक दासी को उसकी स्वामिनी जो भी आज्ञा देती है, उस कार्य को करना पड़ता है |" द्रौपदी विवश थी, नौकरी करने के बहाने विराट नगर में छिपी हुई थी क्योंकि अगर कौरवों को पता लग गया तो फिर १२ वर्ष जंगल जाना पड़ेगा | उसने भगवान् को याद किया - "हे गोविन्द ! तू मेरी रक्षा करना | मुझे रानी सुदेक्षणा अपने दुष्ट भाई कीचक के पास नाट्यशाला में भेज रही है | जहाँ एकांत है, सुंदर सजा हुआ भवन है |" वह नाट्यशाला में मदिरा का पात्र लेकर के चली गयी | कीचक ने देखा कि द्रौपदी आ रही है तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और जैसे ही वह निकट पहुँची, उसने द्रौपदी को पकड़ने की कोशिश की | द्रौपदी ने सूर्य की ओर हाथ उठाकर कहा – "हे सूर्य ! यदि मैं पवित्र हूँ तो तू मेरी रक्षा कर |" द्रौपदी पवित्र थी, पूर्वजन्म के शाप से पाँच पति मिले थे लेकिन वह उनके अलावा किसी और को नहीं देखती थी, उसका आचरण बड़ा पवित्र था | दस हजार ब्राह्मणों को भोजन कराने के बाद वह भोजन करती थी | कीचक उसका हाथ गंदे भोग के विचार से पकड़ना चाहता था लेकिन जैसे ही द्रौपदी ने

सूर्य की ओर हाथ जोड़कर के प्रार्थना किया – "हे सूर्य ! तुझको नारायण कहते हैं | यदि तू नारायण है तो मेरी रक्षा कर |" इतना कहते ही आकाश से सूर्य के भेजे हुए २ दूत आये और उन्होंने कीचक को उठाकर दूर फेंक दिया और द्रौपदी बच गयी लेकिन जो कामी होता है, वह जल्दी हार नहीं मानता है, कीचक ने फिर से अपनी बहन रानी सुदेक्षणा से कहा - "बहन ! तुमने अपनी दासी को दिन में भेजा था किन्तु अब उसे रात में मेरे पास भेजो |" उसकी बहन चुप रही और उसने धीरे से कहा - "भैया ! ये दासी साधारण नहीं है, उसको पकड़ने की चेष्टा करने पर तुमको दिन में आकाश के दूतों ने फेंक दिया, अब भी तुम सम्भल (सावधान हो) जाओ |" कीचक बोला - "मुझसे तू ज्यादा बात मत कर, उसे मेरे पास रात में भेज देना, मैं सब समझता हूँ | मेरी भुजाओं में दस हजार हाथियों का बल है |" द्रौपदी पांडवों के पास वेश बदलकर के गयी, भीमसेन राजा विराट नरेश के यहाँ रसोइया का काम करते थे, उनका नाम 'वल्लभ' था, वह बहुत खाते थे, जो मनुष्य बहुत खाता है, वह अच्छा भोजन बनाता है | भीम ऐसा भोजन बनाते थे कि सब लोग उनसे प्रसन्न थे | भीमसेन को लोग पेटू भी कहते थे, इनका एक नाम 'वृकोदर' भी था, इनके पेट में 'वृक' नाम की अग्नि थी, ये जितना भी खाते थे, सब हजम हो जाता था | भीमसेन द्रौपदी को देखकर के बहुत प्रसन्न हुए किन्तु द्रौपदी रोने लग गयी कि तुम लोगों के रहते मेरी यह दुर्दशा हो रही है | कीचक ने मुझको आज पकड़ना चाहा था, मैंने सूर्य देवता से प्रार्थना की तो आकाश से २ दूत आये और उन्होंने मुझे बचाया, नहीं तो आज ही मैं भ्रष्ट हो जाती | अब रानी ने कहा है कि तू रात में कीचक के पास जा | भीमसेन बोले - "बड़ा अच्छा है, तू स्वयं चली जा और कीचक से कह कि मैं तो नाट्यशाला में मिलूँगी, वहीं आ जाना | तेरे कहने से वह जरूर आयेगा और फिर मैं उसको देख लूँगा |" द्रौपदी बिना किसी भय के हँसती हुई कीचक के पास गयी, उसने कीचक को नाट्यशाला में बुलाया | कीचक प्रसन्न हो गया और सोचने लगा कि यह तो मेरे प्रति अत्यधिक आसक्त हो गयी है | द्रौपदी ने उससे कहा था कि रात को नाट्यशाला में आ जाना और कीचक ने कहा था कि मैं अवश्य आऊँगा | इधर भीमसेन ने स्त्रियों के कपड़े लंहगा-फरिया आदि पहने और स्त्रीवेश बनाकर नाट्यशाला में कपड़ा ओढ़कर सो गये | भीमसेन का एक नाम था 'निमूँछिया', उनकी दाढ़ी-मूँछ भी नहीं थी | दाढ़ी-मूँछ होती तो अपने को छिपाना कठिन होता | कीचक रात को नाट्यशाला में गया, भीमसेन बिस्तर पर स्त्रीवेश में रंगीन चूनरी और रंगीन चादर ओढ़कर लेटे थे जैसे कि कोई गहरी नींद में सो रहा है | कीचक गया और हाथ से पकड़कर के उठाने लग गया - "सुन्दरी उठो, मैं आ गया हूँ" लेकिन भीमसेन कुछ नहीं बोले, चुपचाप लेटे रहे | कीचक ने हाथ पकड़कर के उठाया और बोला - "सुन्दरी ! तुम मुझे बुलाने आयी थी, देखो, अब मैं आ गया हूँ, कीचक तुम्हारे प्रेम का प्यासा है, उठो," किन्तु कई बार जगाने पर भी भीमसेन अनसुनी कर गये | आखिर में जब उसने जोर से हाथ पकड़कर के उठाया तो भीमसेन ने सब चुनरी इत्यादि वस्त्र फेंक दिये और विशाल शरीर के साथ बाहर निकले | कीचक ने देखा तो सोचने लग गया कि यह कौन है ? **"मैंने तो जानी कुलवंती नार, ये तो निकला संडफा यार |"** भीमसेन अभिनय करते हुए बोले - "आओ ! आओ प्राणप्रीतम आओ !! अपने प्रेम की प्यास बुझाओ |" ऐसा कहकर वे कीचक के ऊपर टूट पड़े और दोनों में युद्ध होने लग गया | ऐसा युद्ध हुआ कि नाट्यशाला उखड़ गयी | बड़े-बड़े सुंदर पर्दे, बड़े-बड़े सुंदर बिछौने, गद्दे आदि फट गये | सारी रात लड़ाई हुई और आखिर में भीमसेन जीत गए और जीतने के बाद कीचक को पटक करके उसके हाथ-पाँव को पेट में घुसा दिया | उसका सारा शरीर एक गोल लड्डू बना दिया, जिससे कोई उसे पहचान नहीं सके | भीम कीचक के गोल लड्डू जैसे शरीर को उठाकर के, नाट्यशाला के बाहर जंगल में फेंक

आये | सबेरे लोग उठे तो उन्होंने देखा कि एक बहुत बड़ा मांस पिंड पड़ा है लेकिन यह कौन है, वे पहचान नहीं पाये | बहुत मुश्किल से पता लगा कि ये तो कीचक है |

अस्तु, भीष्म ने दुर्योधन से कहा कि एक ओर तो विराट नगर में गायें बढ़ गयीं हैं और दूसरी ओर कीचक मर गया है | कीचक को मारने वाला भीमसेन के अलावा दुनिया में कोई नहीं है | इसलिए मेरा अनुमान है कि पांडव विराट नगर में ही हैं | दुर्योधन ने कहा कि अगर पांडव वहीं हैं तो छिपके रह रहे हैं | कैसे पता पड़े कि वे ही पाण्डव हैं या कोई और हैं? कौरवों की सभा हुई, सबने कहा कि विराट की गायों को चुरा लो | पांडव लोग गायों पर अत्याचार नहीं देख सकते हैं | अगर पांडव वहाँ होंगे तो लड़ने के लिए मैदान में आयेंगे और लड़ने के लिए जब आ जायेंगे तो भेद खुल जायेगा और हम लोग फिर से जीत जायेंगे; इस लक्ष्य से विराट नगर पर चढ़ाई हो गई | सुशर्मा नामक एक बड़ा बलशाली राजा था, वह कौरवों के पक्ष का था, उसने कहा कि पहले मैं विराट नगर पर हमला कर दूँगा, वह इतना बली था कि भीमसेन की टक्कर ले सकता था | सुशर्मा ने विराट नगर पर आक्रमण किया तब भीमसेन मैदान में उतर आये और सुशर्मा को हरा दिया | उसके बाद कौरवों ने गायों की चोरी की | विराट नरेश के यहाँ करोड़ों गायें थीं, दस लाख तो गायों के वर्ग थे | एक-एक वर्ग में हजारों गायें थीं, उनको कौरवों ने चुरा लिया तब राजा विराट चिंतित हुए और उदास हो गये, वह उदास इसलिए हुए क्योंकि गोधन ही असली धन है | गोधन के कारण ही सारे विराट नगर की भूमि दिव्य बनी हुई थी | शास्त्रों में लिखा है कि जहाँ गायें रहतीं हैं वहाँ रोग और शोक नहीं रहते, अपने-आप ही रोग वहाँ से भाग जाते हैं | अर्जुन राजा विराट के यहाँ नपुंसक बृहन्नला के रूप में रहते थे, वे उर्वशी के शाप से १ साल के लिए नपुंसक बन गये थे | जब अर्जुन शस्त्र विद्या सीखने के लिए स्वर्ग गये हुए थे तो एक बार उर्वशी काममोहित होकर उनके पास गयी थी | त्रिलोक सुन्दरी उर्वशी को अर्जुन ने माताजी कहकर पुकारा तो उसने शाप दे दिया कि जा, तू नपुंसक बन जा | अर्जुन संयमी थे, उन्होंने कहा कि मेरी मृत्यु भले ही हो जाये लेकिन मैं पाप नहीं करूँगा, तेरे साथ विहार नहीं करूँगा | अज्ञातवास के समय अर्जुन राजा विराट के यहाँ बृहन्नला के रूप में (जनाने वेश में) रहते थे | जब कौरव राजा विराट की गायों की चोरी करके ले गये तो बृहन्नला राजा विराट के पास पहुँची और उसने कहा कि राजन् ! आप उदास मत हो, आपकी गायों की सुरक्षा मैं करूँगी | विराट ने कहा – "अरी बृहन्नले ! तू क्या करेगी? कौरवों की सेना में भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कर्ण जैसे महारथी हैं, देवता भी उनकी टक्कर नहीं ले सकते, ऐसे परम वीर योद्धाओं के सामने तू क्या करेगी ?" बृहन्नला बोली – "राजा साहब ! आपको पता नहीं, मैं अर्जुन हूँ |" विराट – "अरे ! तू तो नपुंसक है, तू भला महावीर अर्जुन कैसे हो सकती है और वास्तव में यदि तू अर्जुन है तो उसके १० नाम बता, वह दुनिया में कोई नहीं जानता है |" बृहन्नला ने अर्जुन के १० नाम बता दिये | राजा विराट ने आश्चर्यचकित होकर कहा - "अरे अर्जुन, तुम यहाँ कैसे आये ?" अर्जुन – "हम पाँचों पांडव और द्रौपदी तुम्हारे यहाँ गुप्त रूप से रह रहे हैं | भीमसेन ने ही कीचक को मारा था, ये दूसरा प्रमाण है | दस हजार हाथियों की ताकत वाले कीचक को दुनिया में केवल भीमसेन ही मार सकते हैं, अन्य कोई नहीं मार सकता |" विराट – "ठीक है, मैंने मान लिया कि तुम अर्जुन हो किन्तु क्या तुम गायों की रक्षा के लिए कौरवों से लड़ोगे ?" अर्जुन – "हाँ, मैं युद्ध करूँगा और गायों को छुड़ाकर लाऊँगा | अवश्य ही कौरवों की ओर से युद्ध करने के लिए भीष्म, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और कृपाचार्य हैं, फिर भी गायों को छुड़ाने के लिए मैं उनसे लडूँगा | गौमाता की कृपा से मैं निश्चित रूप से विजयी हो जाऊँगा | अर्जुन ने युद्धभूमि में जाकर के कौरवों के परम वीर महारथियों भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कर्ण को अकेले ही पराजित कर उनसे गायों को मुक्त करा लिया | सब गायें वापस विराट नगर में आ गयीं | इसलिए जहाँ गायें हैं, वहाँ विजय अवश्य होती है, ये बात सत्य है, महाभारत की उपरोक्त कथा इस बात का प्रमाण है |

परम प्रेम का प्रारूप

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'भक्ति के मूलभूत सिद्धान्त' (१०/७/२०१३) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी नवीनाश्री जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे -) भगवान् ने गीता में कहा –

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥

(श्रीमद्भगवतगीताजी- २/४७)

फल को कभी मत सोचो | हानि-लाभ, जीत-हार की कभी मत सोचो | श्रीगीताजी में ही भगवान् ने कहा है -

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ । ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥

(श्रीमद्भगवतगीताजी- २/३८)

सुख-दुःख को समान समझो, हानि-लाभ, जय-पराजय को समान समझो और तब लड़ो फिर तुमको पाप नहीं लगेगा | आपसी फूट नहीं बढ़ानी चाहिए | जब मनुष्य में कर्तृत्त्व आता है तब वह वह फल की ओर सोचता है कि हम (किसी अभियान से) निराश लौटेंगे तो हमारी बेइज्जती हो जाएगी, कुछ लेकर लौटेंगे तो सम्मान बढ़ेगा, फल की ओर सोचना ही एक बन्धन है; ऐसे अवसरों पर यह बात सदा याद रखनी चाहिए कि भगवान् ने गीता में अर्जुन से कहा –

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥

(श्रीमद्भगवतगीताजी- २/५१)

कर्मज फलों को छोड़ने पर तुम जन्म बन्धन से छूट जाओगे | अनामय पद पर पहुँच जाओगे लेकिन हम फल को छोड़ नहीं पाते हैं, हमेशा फलों में उलझे रहते हैं | फल क्या है? आम, अमरूद, सेब आदि फल नहीं हैं; 'कर्मों का विपाक' अर्थात् कार्य का परिणाम ही फल है, जैसे - सुख-दुःख, हानि-लाभ, जय-पराजय आदि; इनके बारे में कुछ मत सोचो, केवल कर्म करने के बारे में सोचो – **"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।"** यदि फल की ओर सोचोगे तो कमजोर हो जाओगे इसलिए भक्ति के मूलभूत भावों को समझना चाहिए और शुरू से ही इन्हें समझोगे तो आखिर तक गड़बड़ी नहीं आयेगी | भागवत के प्रथम स्कन्ध के द्वितीय अध्याय में पुरुषार्थ-चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) का निर्णय किया गया है, मनुष्य इनको चाहता है; धर्म चाहता है, क्यों ? क्योंकि धर्म से अर्थ मिलेगा | 'अर्थ' क्यों चाहता है? क्योंकि उससे कामनायें पूरी होंगी और फिर होशियार आदमी मोक्ष चाहता है, उन कामनाओं से छूटना चाहता है; ये चार ही चीजें मनुष्य चाहता है, यदि वह धर्म का अर्थ 'फल' न माँगे, अर्थ का फल 'काम' नहीं माँगे और काम का परिपाक 'मोक्ष' नहीं माँगे, कुछ नहीं माँगे तो उसकी जड़ मजबूत रहेगी | धर्म भी तुमको गिरा देगा, अर्थ भी गिरायेगा, काम भी गिरायेगा, मोक्ष भी गिरायेगा, मोक्ष भी स्वार्थ है, इसलिए कुछ नहीं चाहो | इस बात को भागवत में कहा गया –

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।
अहैतुक्यप्रतिहता ययाऽऽत्मा सम्प्रसीदति ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/२/६)

धर्म क्या है ? ये है केवल भगवान् की भक्ति | कैसी भक्ति ? अहैतुकी भक्ति | उसमें कोई कामना न हो - न धर्म की, न अर्थ की, न काम की, न मोक्ष की | भरतजी ने कहा था-

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान ।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन ॥

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड - २०४)

भागवत, गीता और रामायण आदि भक्तिशास्त्र शुरू से ही जीव को पुष्ट कर देते हैं | भरतजी ने प्रयागराज में भिक्षा

माँगी कि मुझे अर्थ नहीं चाहिए, धर्म नहीं चाहिए, भोग आदि कामनायें नहीं चाहिए, मोक्ष भी नहीं चाहिए, ये है 'अहैतुकी भक्ति' | मोक्ष नहीं चाहोगे तो फिर जन्म होगा लेकिन भरतजी कहते हैं, जन्म होने दो –

मागउँ भीख त्यागि निज धरमू ।
आरत काह न करइ कुकरमू ॥

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड- २०४)

माँगना कुकर्म है | माँगना, भगवान् की भक्ति से अलग हटना है –

मोर दास कहाइ नर आसा ।
करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा ॥

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड- ४६)

लोग जन्म भर रामायण पढ़ते हैं किन्तु नर आशा नहीं छोड़ते हैं | कहते हैं कि अमुक स्थान पर नवरात्र का पाठ है, वहाँ जाकर पाठ करने से इतनी दक्षिणा मिलेगी | अनेकों रामायणी नवरात्रि में धन की आशा से रामायण का पाठ करने जाते हैं और इस तरह जीवन भर 'नर-आशा' करते रहते हैं | भरत जी प्रयाग में कहते हैं कि मैं अपना धर्म छोड़कर भीख माँग रहा हूँ, धर्म यही है कि भक्त को कहीं माँगना नहीं चाहिए, किसी से आशा नहीं करनी चाहिए परन्तु यह कुकर्म मैं कर रहा हूँ, क्यों कर रहा हूँ ? क्योंकि आर्त हूँ | दुःखी आदमी क्या नहीं करता है ? भरतजी इसलिए आर्त नहीं थे कि उनकी पत्नी अयोध्या में तड़प रही थी या उनका परिवार तड़प रहा था, भरतजी कहते हैं कि मैं मोक्ष भी नहीं चाहता हूँ | मेरी आर्ति, मेरा कष्ट यही है कि मेरे हृदय में प्रेम नहीं है, अतः मुझे भगवान् का प्रेम मिल जाए, भले ही भगवान् भी मुझे कुटिल समझ लें और लोग मेरी बुराई करें तो कोई बात नहीं | लेकिन मेरा प्रभु-प्रेम नहीं घटे, नित्य-निरन्तर (अनुदिन) अहैतुकी रति बढती रहे। हम लोग किसी की सेवा करते हैं तो चाहते हैं कि वह हमारे ऐहसान से दबा रहे, उसके पास जाकर हम बखान करते हैं कि हमने ये किया, वो किया ताकि वह हमारी मेहनत को समझे लेकिन भरतजी कहते हैं कि मुझको इसकी इच्छा नहीं है, भगवान् यदि मुझको कुटिल कहते हैं या मानते हैं और ऐसा दुनिया भी कहेगी कि भरत गुरु- द्रोही है तो मुझे इसकी कोई परवाह नहीं है, मेरा प्रेम नहीं घटना चाहिए; इसको कहते हैं - भक्त | संसार में कोई भी यदि माँ-बाप की सेवा करता है तो उनसे जाकर कहता है कि मैंने ये किया | शिष्य यदि गुरु की सेवा करता है तो उनसे जाकर कहता है कि मैंने ये किया, जबकि यह बिल्कुल गलत है | भक्ति वही है जो भरत जी ने कहा –

जानहुँ रामु कुटिल करि मोही ।
लोग कहउ गुर साहिब द्रोही ॥

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड- २०५)

इस भाव की टक्कर नहीं है | त्रिलोकी दाँव पर लगा दी जाए तब भी इस विशुद्ध भाव की टक्कर नहीं है, जैसा कि भरतजी कहते हैं कि यदि भगवान् भी मुझे गलत समझते हैं तो समझ लें लेकिन स्वामी से मेरा प्रेम नहीं घटेगा अपितु बढ़ता जाएगा –

सिर काटहु छेदो हिये, टूक टूक करि देहु ।
पै याके बदले बिहँसि, वाह वाह ही लेहु ॥

क्या विचित्र दोहा है, किसी ने सिर काट दिया फिर भी वह उसको कहता है – वाह ! तुमको सिर काटना अच्छा आता है, अच्छा हुआ जो काट दिया | छाती छेद दिया फिर भी वह कहता है - वाह-वाह | ऐसी सहनशीलता, ऐसी निष्कामता ही इष्ट के प्रति सच्चा प्रेम है | हाथ काटा तो कहता है - वाह-वाह, तुम बहुत अच्छा हाथ काटना जानते हो | भक्तिमती (परम सती) कामबाई ने ऐसा किया था, भक्तजनों ने ऐसा किया है |

महापुरुषों ने भी कहा है कि गरीब बनो, तब गरीब निवाज की कृपा मिलेगी।...................................... "नारायन मैं सत्य कहौं भुजा उठाय के आज। जो तू बने गरीब तो मिलैं गरीब निवाज ॥"................

असद्वासना का आधार 'अहंकार'

श्रीबाबा महाराज द्वारा वर्णित 'शिक्षाष्टक' (२५/१/२००६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी कालिंदी जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे –) मानमन्दिर पर कुछ नए साधु अपने को रसिक समझने लग गए और फिर उन्होंने नाम-गुण कीर्तन करना छोड़ दिया, यह गलत है | उनके ऐसा करने से मानमन्दिर का कीर्तन बंद नहीं हुआ लेकिन उनकी मानसिकता नासमझी से युक्त है | कृष्ण-संकीर्तन के अंतर्गत नाम- कीर्तन, गुण-कीर्तन, लीला-कीर्तन, धाम-कीर्तन, जन- कीर्तन, रूप-कीर्तन आदि सभी आते हैं | ऐसा नहीं हो सकता कि हम कृष्ण-लीला तो गायेंगे लेकिन कृष्णनाम नहीं गायेंगे क्योंकि यह तो हल्ला-गुल्ला है अथवा कृष्णलीला तो गायेंगे लेकिन कृष्णगुणगान के अन्तर्गत कृष्ण की दयालुता और उनकी शरणागति के पद नहीं गायेंगे क्योंकि हम तो केवल लीला ही गाते हैं; वस्तुतः ऐसा विचार अशास्त्रीय और अपराध-मूलक है | तुमको अगर लड्डू अच्छा लगता है तो लड्डू खाओ, बर्फी मत छुओ लेकिन बिना मतलब बर्फी की बुराई करते हो, दूसरे को खाने नहीं देते हो, यह गलत बात है | कीर्तन की महिमा के सम्बन्ध में चैतन्य महाप्रभु ने कहा – **"चेतोदर्पण मार्जनम्"** अर्थात् चित्त एक दर्पण है, दर्पण में प्रतिफलन की शक्ति होती है | जैसे - जब आप दर्पण में अपना चेहरा देखते हैं तो दिखाई पड़ता है कि माथे पर तिलक बिगड़ गया है, आँखों में काजल लगा है; यदि दर्पण स्वच्छ रहता है तो इस प्रकार आपके चेहरे का प्रतिफलन करता है | चित्त के भीतर भी प्रतिफलन की शक्ति होती है | चित्त किसका प्रतिफलन करता है? वह निकटस्थ वस्तु का प्रतिफलन करता है, जो पास में होती है | ऐसा नहीं है कि शीशा आपके घर में रखा है और वह २,३ किलोमीटर दूर स्थित वस्तु का प्रतिफलन करेगा | चित्त के निकटस्थ वस्तु है - परमात्मा श्रीकृष्ण, उनका नाम, उनका गुण, उनके जन, उनका धाम | कोई कहे कि चित्त में स्त्री प्रतिफलित होती है, ऐसा कभी नहीं हो सकता | प्राकृतिक वस्तुयें चित्त में प्रतिफलित नहीं हो सकतीं क्योंकि वे चित्त से बहुत दूर हैं | केवल परमात्मा ही सर्वव्यापी है, वह चित्त में प्रतिफलित हो सकता है | कोई कहे कि अमुक व्यक्ति तो बड़ा लम्पट है, दिन-रात स्त्री, स्त्री चिल्लाता है | चिल्लाता अवश्य है किन्तु इससे चित्त में स्त्री का प्रतिफलन नहीं हो रहा बल्कि चित्त पर लेप हो गया है यानि चित्त गंदा हो गया है, जैसे - शीशे के ऊपर मिट्टी लगा दो तो वह (मिट्टी) उसके प्रतिफलन की शक्ति को नष्ट कर देती है लेकिन स्वयं प्रतिफलित नहीं हो सकती, उस मिट्टी का प्रतिफलन आप शीशे में नहीं देख सकते, वैसे ही संसार की जड़ वस्तुएँ चित्त में प्रतिफलित नहीं हो सकती हैं, वे चित्त को लेप करके गंदा कर सकती हैं, उसकी प्रतिफलन शक्ति को कम कर देंगी, नष्ट कर देंगी किन्तु ऐसा नहीं है कि स्वयं चित्त में प्रतिफलित हो जायें | पैसा, स्त्री, लड्डू-पेड़ा आदि विषय चित्त के भीतर प्रतिफलित नहीं हो सकते क्योंकि ये चित्त से बहुत दूर हैं | स्त्री का शरीर चित्त से बहुत दूर है, चित्त के सबसे पास में भगवान् हैं –

सत्त्वं विशुद्धं वसुदेवशब्दितं यदीयते तत्र पुमानपावृतः । सत्त्वे च तस्मिन् भगवान् वासुदेवो ह्यधोक्षजो मे नमसा विधीयते ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/३/२३)

यह चित्त दर्पण है, **'चेतोदर्पण मार्जनम्'** इस चित्त रूपी दर्पण के मार्जन का उपाय यह है कि जैसे - शीशा जब बहुत रगड़ा जाता है तब साफ होता है उसी प्रकार चित्त के स्वच्छ होने के लिए केवल एक दिन कीर्तन कर आये, उससे चित्त रूपी दर्पण साफ हो जाये, ऐसा नहीं होता है | चाहे आप छः घंटे तक कीर्तन कर लो, मृदंग-ढोलक बजाओ, नाचो-कूदो, उससे कुछ नहीं होगा | मार्जन का अर्थ है कि रोज-रोज (नित्यप्रति) बहुत दिनों तक रगड़ा जाए तब चित्त रूपी शीशा साफ होगा, एक ही दिन में तुम सिद्ध नहीं बन जाओगे | यह भौतिक शिक्षा की तरह का

निश्चित कोर्स नहीं है कि एक साल में 'प्रथम कक्षा' और चौदह साल में 'बी.ए'. की पढ़ाई पूरी हो जाये | **'चेतोदर्पणमार्जनं'**- 'मार्जन' माने जो कीर्तन का अभ्यास है, उससे चित्त को हर समय रगड़ना चाहिए | एक साल के रगड़ने में कोई सिद्ध नहीं हुआ है, दो साल तक रगड़ने से कोई सिद्ध नहीं होता है | इस सिद्धान्त को समझना चाहिए, इसे न समझने के कारण मनुष्य को केवल मिथ्या अहंकार हो जाता है कि मैने छः घंटे कीर्तन किया, ४ घंटे कीर्तन किया | इस अहंकार से चित्त और अधिक गंदा हो जाता है, इसलिए मार्जन क्या है, इसे ठीक से समझना चाहिए | मार्जन का मतलब है कि चित्त को बार-बार रगड़ा जाये क्योंकि जैसे - काम, क्रोध की गंदगी है, वैसे ही 'अहंकार' भी गन्दगी है | तुम्हारे मन में यदि 'अहं' है तो चित्त अधिक गंदा हो गया, उसमें प्रतिफलन शक्ति नहीं रहेगी, भले ही तुम कितना भी साधन किये जाओ | दुराचारी व्यक्ति कभी-कभी दैन्य के कारण बड़ा माना जाता है और सदाचारी व्यक्ति अहंकार के कारण नीचा माना जाता है | जैसे –दो भाई भक्त हुए हैं अल्ह और कोल्ह | अल्हजी विषयी थे और कोल्ह जी आचार्य थे, उनके लाखों शिष्य थे लेकिन भगवान् के दरबार में अल्हजी बड़े माने गए, क्यों माने गए ? क्योंकि उनमें 'अहं' नहीं था | हम सदाचार का पालन कर रहे हैं लेकिन अगर 'अहं' है तो हम दुराचारी से भी नीचे पहुँच गए; इन महत्त्वपूर्ण बातों को समझना चाहिए, इन सैद्धान्तिक बातों को न समझने से सभी साधन मिट्टी में मिल जाते हैं (उनका कोई प्रभाव नहीं रहता) **'भवमहादावाग्नि निर्वापणम्'** चित्त में जो भवाग्नि है, यह वासनाओं के संघर्ष से पैदा होती है | जिस प्रकार जंगल में बाँस के पेड़ों की रगड़ से आग पैदा होती है, उसी प्रकार जब हमारे मन में वासनाएँ आपस में रगड़ करती हैं तो ये वासनाएँ आग पैदा करती हैं | जिस प्रकार हमारे मन में स्त्री की वासना या भोग की वासना है तो वासना आकर के रगड़ पैदा करती है फिर उससे आग पैदा होती है, कभी-कभी लोग कामभाव के पीछे हत्या भी कर देते हैं, एक आशिक दूसरे आशिक की हत्या कर देता है | लोभ ने रगड़ पैदा किया तो डाकू बन गए, डाकू बनने के बाद फिर वह हत्या करेगा | वासनाओं की रगड़ से अग्नि पैदा होती है और मनुष्य किसी दूसरे को दोषी समझता है, वह गलत है | शास्त्र कहता है –

कोहु न कोउ सुख दुख कर दाता |
निज कृत करम भोग सबु भ्राता ||

(श्रीरामचरितमानसजी, अयोध्याकाण्ड – ९२)

कोई दूसरा व्यक्ति किसी को दुःख नहीं दे सकता है | हमको किसी ने मारा-पीटा, वह कोई हमारा ही कर्म था | मनुष्य तो एक कर्म वाहक है | चोर क्या है ? कर्म वाहक है | धन जाना था तो वह निमित्त बनकर के आया, उसको कर्म वाहक कहते हैं | जैसे हमने सब्जी मण्डी से पांच मन आलू खरीदे और रिक्शे में डालकर रिक्शे वाले से कहा कि इन आलुओं को हमारे आश्रम में पहुँचा दो | जब रिक्शा वाला आश्रम में आलू लेकर आया तो उन आलुओं में कुछ आलू सड़े थे, अब हम उस रिक्शे वाले को पकड़कर पीटने लगे कि तू सड़े आलू कैसे ले आया ? जबकि देखा जाये तो इसमें रिक्शे वाले का क्या दोष, वह तो वाहक है, तुमने जो माल खरीदकर उसके रिक्शे में लाद दिया, उन्ही को उसने तुम्हारे स्थान पर लाकर पहुँचा दिया और अब तुम उससे बिना मतलब ही लड़ रहे हो | अतः कोई भी आदमी जो हमारा शत्रु है, जो कि हमें मार रहा है, चोरी कर रहा है, निंदा कर रहा है, वह हमारे कर्म का वाहक है | हम मनुष्य से वैर करते हैं तो यह बात गलत है | हर व्यक्ति कर्म का वाहक है | इसलिए दत्तात्रेय जी ने कहा –

भूतैराक्रम्यमाणोपि..|(श्रीमद्भागवतजी११/७/३७)

कोई हमारी हत्या कर रहा है तो दत्तात्रेय जी कह रहे हैं कि वह हमारी हत्या नहीं कर रहा है, वह तो दैववशहत्या कर रहा है | दैव क्या है ? हमारे कर्मफल ही दैव है |

तत्त्व-ज्ञान से विशुद्ध भावोदय

श्रीबाबा महाराज के सत्संग (१८,१९/१/ २०१२) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी वत्सला जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे -) भक्ति में शठताई नहीं करना चाहिए, उसको सही सिद्ध करने के लिए मनुष्य तर्क देता है - नहीं, हम सही हैं, हमने ठीक गुस्सा किया, हमने ठीक किया जो तुमको मारा | यह सब दुष्ट तर्क है, इसे दूर फेंक देना चाहिए अन्यथा भक्ति तो आयेगी नहीं, केवल शठता ही आ जाएगी |

इसीलिये भगवान् ने कहा है - **“भगति पच्छ हठ नहिं सठताई | दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ||”**

अपनी प्रत्येक क्रिया में देखो कि कब हठ आता है; मन, वाणी, क्रिया में भी हठ मत रखो | संत श्री मलूकदास जी ने कहा है – **“गर्व न कीजै बावरे, हरि गर्व प्रहारी |”**

गर्व क्या है, यह हठ है | ‘भक्त’ गर्व या हठ नहीं करते | रावण, दुर्योधन आदि के अन्दर हठ था, उन्हें भगवान् समझाने गये, फिर भी वे नहीं माने | उनके हठ के कारण करोड़ों लोग युद्ध में मारे गये | आदमी हठ नहीं छोड़ता है, यदि हठ छोड़ दे तो अहं बहुत शीघ्र गल जाता है और मनुष्य भक्त बन जाता है | सूरदासजी कहते हैं –

“गरब गोविन्दहिं भावत नाहीं |”

भगवान् को गर्व अच्छा नहीं लगता | भगवान् का नाम है – “दर्पहारी दर्पहा |” भगवान् से ज्यादा द्वेष कोई नहीं करता | नारदजी ने अपने भक्तिसूत्र में लिखा है –

“ईश्वरस्याप्यभिमानिद्वेषित्वाद्दैन्यप्रियत्वाच्च |”

अभिमान (गर्व) से भगवान् को द्वेष है और दैन्य से उनको प्रेम है | शरीर अव्यक्त से पैदा हुआ है, इसलिए इसकी आदि अव्यक्त है और बीच में यह व्यक्त हो जाता है तथा फिर अव्यक्त में यह समाप्त हो जाता है | इसका आदि और अन्त अव्यक्त है, बीच में यह व्यक्त हो जाता है, उसी में लोग आसक्ति (ममता) करते हैं | व्यक्त, जो प्रगट हो गया जैसे - आँख, नाक, कान शरीर आदि आकार व्यक्त हैं और अव्यक्त में ये लीन हो जाते हैं, तब यह शरीर गायब हो जाता है | आँख, नाक, कान, मूख आदि नहीं रहते, ये सब अव्यक्त बन जाते हैं | व्यक्त बनने में गर्भ के भीतर इन्हें दस महीने लगे थे | पहले महीने में स्त्री-पुरुष के शारीरिक सम्पर्क से दोनों का अंश रज-वीर्य घोरुआ (बेर जैसा एक पदार्थ) बन जाता है, दूसरे महीने में उसी घोरुआ से सिर व्यक्त होता है अर्थात् दूसरे महीने में सिर बनता है, उसके पश्चात् तीसरे महीने में हाथ-पाँव बनते हैं, चौथे महीने में शेष अंग तथा पाँचवे महीने में रोम, केश आदि बनते हैं, छठे महीने में सात धातुएँ बनती हैं | शरीर के भीतर सात धातुएँ हैं, जो कुछ भी हम खाते हैं उससे रस बनता है, रस पककर ‘रक्त’ बनता है, यह दूसरी धातु है | तीसरी धातु है - माँस (रक्त पककर माँस बना) | चौथी धातु है - मेदा (मांस पककर मेद बनता है), मेद से अस्थि (हड्डी) का निर्माण होता है, अनन्तर ‘अस्थि’ पककर ‘मज्जा’ (हड्डी के अंदर का गूदा) बनता है, ‘मज्जा’ के पकने पर उसका भी सार ‘वीर्य’ बनता है, जिसे मनुष्य भोग में नष्ट कर देता है, यह सातवीं धातु है, इसके नष्ट होने से शेष छः धातुएँ कमजोर हो जाती हैं, इसीलिए भोगी मनुष्य की आयु अल्प हो जाती है क्योंकि वह अपने शरीर के सार को नष्ट कर देता है | पुरुष के सार अंश को ‘वीर्य’ तथा स्त्री के सार अंश को ‘रज’ कहते हैं | शरीर के सार अंश रज और वीर्य का भोग में नाश हो जाता है, इससे स्त्री और पुरुष दोनों की आयु कम हो जाती है क्योंकि रज-वीर्य के नाश से शेष छः धातुएँ भी कमजोर पड़ जाती हैं | इसलिए अधिक संतान उत्पन्न होने अथवा अधिक भोग से मनुष्य की आयु कम हो जाती है | सातवें महीने में गर्भस्थ शिशु को भूख-प्यास तथा अन्य कष्टों का अनुभव होता है | आठवें महीने में माता को अनुभव होता है कि शिशु बायीं कोख में है अथवा दाहिनी कोख में है | नवें महीने में प्रसूति की वायु शिशु को बाहर की ओर ढकेलती है और दसवें महीने में शिशु का जन्म हो जाता है | इस प्रकार दस महीने में शरीर व्यक्त बनता है | दस महीने के पहले यह अव्यक्त

ब्रज के गाँवों में चले जाओ तो हर गाँव में सैकड़ों साधु पड़े हुए हैं,........ भिक्षा मांगते हैं और ब्रजबासी देते हैं,........ ऐसा देश संसार में कहीं नहीं है |

रहता है | व्यक्त होने के बाद जैसे कोई मनुष्य पचास, साठ, सत्तर अथवा अस्सी वर्ष तक जीता है तो मृत्यु के पश्चात् फिर उसका शरीर अव्यक्त हो जाता है, मृत-देह का दाह-संस्कार करने के उपरान्त शरीर के पाँचों तत्त्व अपने मूल पंचतत्त्व में विलीन हो जाते हैं, 'पृथ्वी तत्त्व' पृथ्वी में विलीन हो जाता है, 'जल तत्त्व' जल में विलीन हो जाता है, इसी प्रकार अन्य तीन तत्त्व भी अपने मूल तत्त्व में विलीन हो जाते हैं | रामचरितमानस में उल्लेख है –

छिति जल पावक गगन समीरा |
पंच रचित अति अधम सरीरा ||

(श्रीरामचरितमानसजी, किष्किंधाकाण्ड - ११)

इस चौपाई में भगवान् राम ने बालि की पत्नी तारा को उपदेश दिया है | जब बालि की मृत्यु हो गई तो उसकी पत्नी तारा विलाप कर रही थी तब भगवान् ने उसे उपदेश देते हुए कहा कि पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश तथा वायु आदि पंच तत्त्वों से यह शरीर बना है और वह शरीर तो तेरे सामने पड़ा हुआ है फिर तू रोती क्यों है ? इस प्रकार भगवान् ने तारा को ज्ञानोपदेश करके माया का हरण कर लिया जो 'माया' जीव को अनादिकाल से बाँधे हुए है | इसीलिए तारा को शीघ्र ही ज्ञान हो गया था अन्यथा हम जैसे लोग प्रतिदिन उपदेश सुनते हैं किन्तु ज्ञान नहीं होता है क्योंकि हमारे अन्तःकरण में माया का आवरण है | गीता में भी भगवान् ने यही कहा है –

अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ||

(श्रीगीताजी ५/१५)

भगवान् ने बालि-पत्नी तारा के हृदय से माया का हरण कर लिया, इसलिए उसे बहुत शीघ्र ज्ञान हो गया जबकि हम जैसे लोग दिन-रात सत्संग सुनते हैं लेकिन कुछ भी ज्ञान नहीं होता है | न तो किसी का काम घटता है, न क्रोध घटता है, न लोभ घटता है | कितना भी समझाया जाये किन्तु किसी का कोई भी विकार घटता नहीं है | कामी व्यक्ति अपनी कामवृत्ति को नहीं छोड़ पाता है, क्रोधी व्यक्ति प्रतिदिन बोध (ज्ञान) कराये जाने पर भी क्रोध नहीं छोड़ पाता है, इसी प्रकार लोभी सदा लोभ से घिरा रहता है लेकिन फिर भी सत्संग से लाभ तो होता ही है, सत्संग के प्रभाव से धीरे-धीरे माया घटती है | सत्संग से निश्चित ही लाभ होता है | भगवान् राम ने तारा को उपदेश दिया कि मनुष्य का शरीर पाँच तत्त्वों से बना हुआ है | शरीर का स्थूल अंश 'हड्डी-माँस आदि' पृथ्वी का अंश है, इसी प्रकार शरीर के भीतर जल है, पावक (गर्मी) है, आकाश छिद्र के रूप में है, नाक का छिद्र आकाश है, रोम छिद्र भी आकाश है और शरीर के भीतर आकाश में वायु है | बयासी (८२) प्रकार की वायु होती है, इसे समीर कहते हैं | प्राणवायु अनेक रूप धारण करती है | हमारे सम्पूर्ण शरीर में वायु भरी पड़ी है | वायु बल का देवता है | जैसे - ट्रक के टायर में हवा भरके ट्रक पर बोझ लाद दिया जाता है तो हवा के कारण सब बोझ टायर द्वारा वहन किया जाता है और वह सौ मन, दो सौ मन तक बोझ ले जाता है | इसी प्रकार हमारे शरीर के भीतर हवा है और हवा ही ताकत है, इसको प्राण कहते हैं, जब जोर लगाते हैं तो साँस खींचते हैं, साँस खींचकर फिर दम लगाते हैं, इसमें ताकत लगती है, इस प्रकार यह वायु हमारे शरीर में है, यह बल का देवता है | प्राणायाम करने वाले में बहुत शक्ति होती है | भारत में राममूर्ति नामक एक पहलवान हुए हैं, प्राणायाम करने के कारण उनके शरीर में इतनी शक्ति थी कि वह चलते हुए ट्रक को रोक लेते थे, गाड़ी स्टार्ट किये जाने पर वह गाड़ी को प्राणायाम की शक्ति से रोक लेते थे तो गाड़ी नहीं चल पाती थी; यह प्राणवायु की शक्ति है, जैसे - रेल इंजन चलता है तो भाप में जो ताकत है, वह रेलगाड़ी को खींचती है | अतः यह सब पाँच तत्वों का खेल है | इसलिए भगवान् राम ने बालि की पत्नी तारा से कहा –

छिति जल पावक गगन समीरा । पंच रचित अति अधम सरीरा ॥
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा । जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा ॥

(रामचरितमानस, किष्किन्धाकांड - ११)

पाँच तत्त्व का यह शरीर तो तेरे सामने पड़ा हुआ है फिर तू क्यों रोती है? तेरे पति का शरीर तो तेरे सामने है और जीव की कभी मृत्यु नहीं होती है, केवल जीव इस शरीर से चला गया है और जीव नित्य है, तेरे पति का शरीर तेरे आगे पड़ा है तथा जीव नित्य है फिर तू क्यों रोती है?

उपजा ग्यान चरन तब लागी | लीन्हेसि परम भगति बर मागी ||

भगवान् की वाणी सुनकर तारा के हृदय में तत्त्व-ज्ञान उत्पन्न हो गया, वह भगवान् के चरणों में लिपट गयी और उसने वरदान माँगा - हे प्रभो ! आप मुझे अपनी भक्ति प्रदान कीजिए |

बुद्धि को शक्तिशाली बनाना चाहिए,.. बुद्धि कैसे ताकतवर बनेगी?.. बुद्धि एकमात्र सत्संग से सुधरती है ।

ऑस्ट्रेलिया में बाल व्यासाचार्या श्रीजी द्वारा उद्बोधन –

(सर्वजनकल्याणकारिणी 'श्रीभक्तिमहारानी')

लेखिका- साध्वी गोविंदी जी, मानमन्दिर, बरसाना

भक्तिमार्ग किसी विशेष जाति,विशेष पंथ अथवा विशेष वर्ण के लिए नहीं है | भगवान् राम ने कहा है –

पुरुष नपुंसक नारि वा जीव चराचर कोय |
सर्वभाव कपट तजि मोहि परम प्रिय सोय ||

चाहे पुरुष हो, स्त्री हो अथवा नपुंसक हो, भक्तिमार्ग में सबका अधिकार है | गजराज का कोई मनुष्य शरीर नहीं था, हाथी की तामस योनि में भी उसे भगवत्प्राप्ति हो गई | गीताजी में भगवान् ने बहुत सुन्दर श्लोक कहा है –

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्यु पापयोनयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता ९/३२)

स्त्री हो, वैश्य हो, शूद्र हो, चाण्डाल हो अथवा किसी भी जाति का हो, जो जीव मेरे शरणागत हो जाता है, वह तत्क्षण ही मुझे प्राप्त कर लेता है, चाहे वह किसी भी जाति का, किसी भी वर्ण का हो | **गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन |**
बिनु हरिकृपा न होई सो गावहिं वेद पुरान ||

वेद-पुराणों में लिखा है कि भगवान् ने हमें जो सत्संग का अवसर दिया है, यह बिना ठाकुरजी की कृपा के नहीं मिलता है | सत्संग में आने पर तो गधा और कुत्ता भी भगवत्प्राप्ति कर लेता है | भागवतमाहात्म्य में लिखा है कि जिस समय श्रीगोकर्णजी ने धुंधुकारी के उद्धार के लिए श्रीमद्भागवत कथा कही तो धुंधुकारी को नित्यधाम की प्राप्ति हो गई तथा भागवत का दूसरा चमत्कार यह हुआ कि गाँव के गधे-कुत्ते और चाण्डाल तक को सत्संग की ध्वनि श्रवण करने के कारण भगवद्धाम की प्राप्ति हो गई | सत्संग में ऐसी सामर्थ्य है कि उसके प्रभाव से कौवा भी हंस के समान हो जाता है | दो प्रकार के दोष होते हैं - एक शरीर का और दूसरा मन का | जैसे - कोई कामी है, क्रोधी है तो यह मन का दोष है | मनुष्य की प्रवृत्ति है कि वह काम, क्रोध और लोभादि विकारों से ग्रसित रहता है | शरीर का दोष है कि कोई बीमारी हो जाये | जैसे - श्रीचैतन्य महाप्रभु के परिकर श्रीसनातन गोस्वामीजी को एक बार भयंकर चर्म रोग हो गया किन्तु महाप्रभु उनसे

मिलने जाते थे और सत्संग की चर्चा करने के पश्चात् उन्हें अपने हृदय से लगा लेते थे | सनातन गोस्वामी को इससे बहुत कष्ट होता था कि मेरे शरीर में भयंकर चर्म रोग है, उससे दुर्गन्धयुक्त पीब बहता है और महाप्रभु जो कि साक्षात् श्रीकृष्णावतार हैं, मुझे हृदय से लगाते हैं तो उनके दिव्य शरीर में भी मेरा गन्दा पीब लग जाता है अतः मैं गंगाजी में कूदकर इस शरीर का त्याग कर दूँगा | जब सनातनजी देह विसर्जन हेतु चले तो महाप्रभु जी को पता लग गया और उन्होंने सनातनजी का हाथ पकड़कर उनसे कहा कि जब यह शरीर तुम्हारा नहीं है तो तुम इसे त्यागने की क्यों सोच रहे हो, यह तो श्रीठाकुरजी का शरीर है और मैं तो स्वयं को पवित्र करने के लिए तुम्हारे शरीर का आलिंगन करता हूँ क्योंकि भक्ति में ऐसी ही सामर्थ्य है | आगे महाप्रभुजी की कृपा से सनातन गोस्वामीजी का रोग दूर हो गया | भक्ति के प्रभाव से शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के दोष नष्ट हो जाते हैं | मानसिक दोष कैसे सत्संग के प्रभाव से नष्ट होते हैं इस सम्बन्ध में उदाहरण है श्री चैतन्य महाप्रभु के अन्य परिकर जिनका नाम था हरिदास ठाकुर, इनका जन्म तो यवन (मुसलमान) परिवार में हुआ था किन्तु बचपन में ही माता-पिता की मृत्यु हो जाने और भक्त-संग के प्रभाव से ये दिन-रात श्रद्धा के साथ नाम जप किया करते थे | मुसलमानों ने देखा कि यह हमारी जाति का होकर हिन्दुओं के जैसा आचरण करते हुए उनके भगवान् का नाम लेता है तो उन्हें २२ बाजारों में घुमाकर कोड़ों से बुरी तरह पीटा किन्तु फिर भी हरिदासजी 'हरिबोल-हरिबोल' करते रहे | मुसलमान जल्लाद उनको जोर से मारकर कहते – "और 'हरिबोल' कहेगा |" ये (हरिदासजी) कहते – "हाँ, भैया ! मुझे कितना भी मार लो लेकिन 'हरिबोल' कहो |" श्रीनामाचार्य हरिदासजी महाराज चाहते थे कि किसी भी तरह इन पतितों के मुख से 'हरिनाम' का उच्चारण होता रहे; ऐसे असीम दयामय दिव्य महापुरुष थे श्रीहरिदासजी |

अमेरिका (मंगल मन्दिर) में साध्वी मुरलिकाजी का सम्भाषण –

परम तत्त्व 'श्रीभक्तजन'

लेखिका- साध्वी रमा जी, मानमन्दिर, बरसाना

भगवान् अपने भक्त की महिमा अपने से अधिक बढ़ा देते हैं, भक्त का उत्कर्ष बढ़ाते हैं; इस प्रसंग में गोस्वामी तुलसीदासजीमहाराज कहते हैं –

"अधिक बढ़ावत आपु ते, जन-महिमा रघुवीर ।"

'भक्त' एक ऐसा तत्त्व है, जिसको 'भगवत्तत्त्व' से भी आगे रखा जा सकता है | श्रीभक्तमालजी का जब उपसंहार हुआ तो 'भक्त परत्व' में अग्रदेवाचार्यजी महाराज ने बहुत सुन्दर छप्पय लिखा है –

कविजन करत विचार बड़ौ कोउ ताहि भनिज्जै ।
कोउ कह अवनी बड़ी जगत आधार फनिज्जै ॥
सो धारी सिर सेस, सेस शिव भूषन कीनौ ।
शिव आसन कैलास, भुजा भरि रावन लीनौ ॥
रावन जीत्यौ बालि, बालि राघो इक सायक दँड़े । 'अगर' कहैं त्रैलोक में, हरि उर धरें तेई बड़े ॥

(श्रीभक्तमालजी, छप्पय – २००)

इस छप्पय का भाव ये है कि एक बार सभी ऋषि-मुनियों की एक सभा हुई, जिसमें ये प्रश्न पूछा गया कि संसार में सबसे श्रेष्ठ तत्त्व क्या है ? किसी ने कहा कि सृष्टि में सबसे श्रेष्ठ तत्त्व है पृथ्वी, जिस पर सारा संसार टिका हुआ है | किसी ने कहा कि पृथ्वी तत्त्व तो सर्वश्रेष्ठ नहीं है क्योंकि वह तो शेषनाग जी के फन पर राई के दाने की तरह पड़ी हुई है इसलिए पृथ्वी से श्रेष्ठ तत्त्व हुए शेषनाग जी | ऋषियों ने विचार किया कि शेष जी भी श्रेष्ठ तत्त्व नहीं हैं क्योंकि ऐसे कितने ही नाग शंकर जी अपने शरीर में धारण किये रहते हैं | इसलिए शिव तत्त्व सबसे बड़े हैं किन्तु किसी ने कहा कि शिव जी को तो कैलाश पर्वत अपने ऊपर धारण किये हुए है इसलिए कैलाश सर्वश्रेष्ठ है फिर ऋषियों ने विचार किया कि कैलाश पर्वत को तो रावण ने एक बार तपस्या करते समय अपने हाथों में उठा लिया था, इसका मतलब ये हुआ कि कैलाश से भी श्रेष्ठ रावण हो गया किन्तु यह तो गड़बड़ हुआ, रावण कैसे सर्वश्रेष्ठ हो सकता है | इसके बाद और सूक्ष्मता से विचार किया गया कि बालि और रावण के बीच एक बार युद्ध हुआ तो बालि इतना बलवान था कि उसने रावण को अपने बगल में दबाकर सातों द्वीपों की परिक्रमा कर ली थी अतः रावण से श्रेष्ठ तो बालि हुआ | उसी बालि को रामजी ने अपने एक ही बाण से मार दिया, दूसरे बाण की जरूरत ही नहीं पड़ी | इसलिए श्रेष्ठ तो राम जी हुए किन्तु ऋषियों ने कहा कि राम जी सर्वश्रेष्ठ नहीं हो सकते क्योंकि उन्ही रामजी को हनुमान जी ने अपने हृदय में ऐसे कैद कर लिया था कि जब कहो तो छाती चीर के दिखा दें कि ये बैठे हैं राम जी | ये हनुमान जी कौन हैं ? वह भक्त तत्त्व हैं अतः भगवत तत्त्व से भक्त तत्त्व श्रेष्ठ हुआ | श्रीमद्भागवतजी में लिखा है –

सकलभुवनमध्ये निर्धनास्तेऽपि धन्या
निवसति हृदि येषां श्रीहरेर्भक्तिरेका ।
हरिरपि निजलोकं सर्वथातो विहाय
प्रविशति हृदि तेषां भक्तिसूत्रोपनद्धः ॥

(भागवतमाहात्म्य - ३/७३)

चौदह भुवनों अर्थात सम्पूर्ण ब्रह्मांड में अगर कोई जीव निर्धन है, जिसके पास न खाने को भोजन है, न पहनने को वस्त्र है, कोई भी सुविधा जिसके पास नहीं है फिर भी वह धन्य है, जिसके हृदय में भगवान् की अनन्य भक्ति बैठ गई है क्योंकि जिसके हृदय में भगवान् की एका भक्ति (अनन्य भक्ति) आ गई है, अखिल कोटि ब्रह्मांड नायक भगवान् श्रीहरि भी उसके हृदय में आने के लिए अपना नित्य धाम वैकुण्ठ और गोलोक

हीन व्यक्ति के साथ बुद्धि हीन हो जाती है।.. समान व्यक्ति के साथ बुद्धि समान हो जायेगी ....और महापुरुषों के संग से बुद्धि महान बन जाती है।

भी छोड़ देते हैं और उसी के हृदय में घुसते हैं, जहाँ भक्त भक्ति की रस्सी लेकर तैयार बैठा है कि भगवान् कब आवें उनको बंदी बनाकर हृदय में बैठा लें। यह इसलिए कहा गया कि भगवान् अपने भक्तों का उत्कर्ष स्वयं बढ़ाते हैं। नरसी जी के चरित्र को पढ़कर आप क्या सोचेंगे कि उन्होंने जो अपने जीवन में चमत्कार दिखाए क्या इसलिए दिखाए कि लोग उनसे प्रभावित हो जाएँ, क्या इसलिए कि लोग उनको भक्तराज मानें, प्रणाम करें या संसार उनको यशस्वी पुरुष के रूप में देखे, नहीं, ऐसा नहीं है। मीराजी के चरित्र को पढ़कर आप क्या सोचेंगे, क्या उन्होंने जहर इसलिए पिया था कि लोग हजारों साल तक ये गायें कि जहर पीकर मीरा नहीं मरी। मीरा जहर पीकर नहीं मरी, यह उत्कर्ष, ये प्रभाव उन्हें गिरिधारी ने दिया था। महाकाव्य गीतगोविन्द के रचियता जयदेवजी के चरित्र को पढ़कर आप क्या कहेंगे, उनके हाथ-पाँव कट जाने पर भी उन्होंने राजा लक्ष्मणसेन से कहा कि मैं बड़े सुख में हूँ, मेरा भजन अच्छे से बन रहा है, जिस स्थिति में भजन बन जाये, वह सबसे सुखमयी स्थिति है। शुकदेव जी सोलह साल तक अपनी माँ के गर्भ से बाहर नहीं निकले जबकि गर्भ से अधिक कष्टदायक और घृणित स्थान दुनिया में कोई नहीं है। अरे, संसार में कितना भी बड़े से बड़ा कष्ट हो, आप उस कष्ट को कह सकते हो, किसी को सुना सकते हो। मनुष्य किसी अन्य व्यक्ति के सामने रोकर अपना दुःख हलका कर लेता है, मन हलका कर लेता है। गर्भ एक ऐसा कष्टप्रद स्थान है, जिसके कष्ट को आदमी कह नहीं सकता, पैदा होने के बाद बालक को गर्भ का कष्ट याद नहीं रहता, लोग भूल जाते हैं। माता को भी गर्भावस्था तथा प्रसव के समय दुःसह कष्ट होता है। **"जनमत मरत दुःसह दुःख होई** ।" यदि जीवों को ये सब दुःख याद रहे तो भगवान् कभी भी चित्त से विस्मृत नहीं होंगे, निरन्तर 'भगवत्स्मृति' बनी रहेगी। शुकदेवजी उसी असह्य दुःखमय गर्भ में बारह वर्ष तक रहे जबकि नौ महीने के गर्भ धारण में ही माता और बालक की हालत खराब हो जाती है। बारह वर्ष तक गर्भ में रहने पर पिता व्यासजी ने कहा कि पुत्र ! बाहर आ जाओ, कब तक गर्भ में रहोगे। शुकदेव जी बोले कि नहीं, पिताजी ! भजन यहीं बढ़िया बन रहा है तो बाहर आने की क्या जरूरत ? बाहर आयेंगे तो **"भूमि परत भा ढाबर पानी। जिमि जीवहिं माया लपटानी ॥"** जैसे वर्षा का पानी जब तक भूमि में छू न जाये तब तक पवित्र रहता है, भूमि में स्पर्श होते ही गन्दा हो जाता है; वैसे ही संसार में जीव आते ही माया से लिप्त हो जाता है तो मुझे आना ही नहीं संसार में। व्यासजी बोले - अरे बेटा ! मैया की तो सोच ले कि अपना भजन ही भजन सोचेगा। शुकदेव जी बोले कि माता जी की माता जी जानें, हमारी हम जानें और पिता जी आपकी आप जानो, हमें किसी से कोई लेना देना नहीं है। जब शुक प्रभु ने बाहर संसार में आने को मना कर दिया तब व्यासजी महाराज को श्रीठाकुरजी याद आये और कहा कि हे नाथ ! आप ऐसी प्रेरणा करो कि मेरा पुत्र बाहर तो आये किसी तरह। तब श्रीभगवान् ने शुकदेवजी से कहा कि तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारी वाणी का आश्रय भी जो कोई ले लेगा (तुम्हारी वाणी से निकले हुए भागवतरसामृत को जो सुनकर आस्वादन कर लेगा) उसको भी माया नहीं छुएगी, फिर हे शुक ! तुम क्यों घबड़ा रहे हो ? श्रीठाकुरजी के कहने से शुकदेवजी बाहर आये और बाहर आते ही बिना किसी संस्कार के (नालछेदन आदि से रहित) हुए जंगल की ओर निकल गए। भागवतजी में प्रारम्भ में ही श्लोक में लिखा है – **"यं प्रव्रजन्तं...विरहकातर आजुहाव ।"** पिताजी चिल्ला रहे हैं – "ओ बेटा ! ओ बेटा !! अरे शुक ! अरे शुक !!" व्यासजी कौन हैं ? भगवान् हैं, तो क्या व्यासजी को पुत्र मोह हो गया, पुत्र मोह नहीं हुआ, परन्तु जहाँ शुकदेवजी जैसा बेटा मिल जाये तो ऐसे बेटे में मोह होना कोई बुरी बात भी नहीं है। शुकदेवजी कौन हैं ? **"नन्दनन्दन रूपस्तु श्रीशुको भगवान् हृषीक ।"** नन्दनन्दन श्रीकृष्ण ही शुकदेवजी के रूप में आये हैं। अब ऐसे दिव्य पुत्र को पाकर पिता को चिन्ता क्यों न हो !! शुकदेवजी हों या फिर नरसी जी हों या मीराबाई हों, ये जितने भी भक्ततत्त्व (भागवतजन) हैं, इनके जीवन में जो जो भी चमत्कृतियाँ थीं, उन चमत्कृतियों को दिखाना इनका लक्ष्य नहीं था। उन चमत्कृतियों को दिखाना भगवान् का लक्ष्य था, भगवान् का ध्येय था ताकि उन चमत्कृतियों के प्रभाव से इन महापुरुषों के विशाल वृहत्तम चरित्रों के किसी भी सूक्ष्मतम अंश को इस संसार के लोग जान सकें।

साधन करना आवश्यक है, लेकिन.. 'मैं कर रहा हूँ'.. यह साधन का अहम् नहीं करना चाहिए।

‘श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान’ द्वारा ‘श्रीभगवन्नामसंकीर्तन-प्रभातफेरी’ का ‘श्रीब्रजमण्डल-धाम’ में तीव्रगति से प्रचार-प्रसार

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी हेमा जी, मानमन्दिर, बरसाना

मानमन्दिर के संतों द्वारा ब्रज के गाँव-गाँव में संकीर्तन प्रभातफेरी के प्रचार का अभियान जारी है | इस समय कामा तहसील के अंतर्गत प्रचार किया जा रहा है | भीषण ग्रीष्म ऋतु में सुबह साढ़े ४ बजे ही मानमन्दिर के संतजन वाहन में बैठकर गाँवों में चले जाते हैं और ब्रजवासियों को भगवन्नाम-संकीर्तन की शास्त्र-प्रमाणित महिमा सुनाकर उनसे अपने गाँव में प्रभातफेरी कार्यक्रम शुरू करने का अनुरोध करते हैं | इसके साथ ही पूरे गाँव में भ्रमण करके वे कीर्तन करते हैं और गाँव के ही विभिन्न स्थलों पर रुककर ब्रज के रसिया गाते हैं, नृत्य करते हैं | इन्हें ऐसा करते देख ब्रजवासियों के हृदय में सोयी हुई ब्रजभक्ति जाग्रत हो जाती है और ब्रजगोपियाँ अत्यन्त उत्साह के साथ कीर्तन और रसिया की धुनों पर नृत्य करने लगती हैं | मई-जून की इस प्रचंड गर्मी में भी थोड़ी ही देर में सारा गाँव एकत्रित हो जाता है और मानमन्दिर के संतों के अनुरोध पर वे प्रभातफेरी में जाने का वचन देते हैं | कई ऐसे गाँव भी देखने को मिले जहाँ प्रभातफेरी पूर्णतया बंद थी किन्तु मानगढ़ के इन संतो के अथक प्रयास से इन गाँवों में अब धूमधाम के साथ प्रभातफेरी चल पड़ी है | जिन गाँवों में थोड़ी संख्या में ब्रजवासी प्रभातफेरी में जाते थे, इन संतों के प्रयास से उन गाँव में बहुत बड़ी संख्या में ब्रजवासी प्रभात फेरी में जाने लगे हैं | ये संत कहीं देने पर भी एक पैसा नहीं लेते, निष्काम भाव से प्रचार करते हैं और गाँव में ब्रजवासियों की मधुकरी (भिक्षान्न) लेकर उसी का शुद्ध प्रसाद पाते हैं, इसके अतिरिक्त सभी गाँवों में वे मानमन्दिर से प्रकाशित श्री बाबा महाराज के सत्संग का साहित्य और मासिक पत्रिका भी निःशुल्क रूप से वितरित करते हैं | हाल ही में संतों द्वारा जिन गाँवों में प्रचार किया गया, उसकी एक सूची भी दी जा रही है जिनसे पता चलेगा कि पहले कुछ गाँवों में लोग बिल्कुल भी प्रभातफेरी में नहीं जाते थे और अब वहाँ कितने लोग जाने लगे हैं तथा जिन गाँवों में पहले जितने लोग जाते थे, अब प्रचार के बाद कितने लोग वहाँ प्रभातफेरी में जा रहे हैं |

यद्यपि आध्यात्मिक जागृति का स्रोत भगवन्नाम-प्रचार का यह कार्य मानमन्दिर सेवा संस्थान के संत कोई नवीन कार्यक्रम के रूप में नहीं कर रहे हैं अपितु ब्रज के परम विरक्त संत श्री रमेश बाबा महाराज दीर्घकाल से न केवल ब्रज के १३०० गाँवों में भगवन्नाम की अलख जगा चुके हैं अपितु इसके अतिरिक्त भी भारतवर्ष के ३० से ३५,००० गांवों में प्रभात फेरी कार्यक्रम चला चुके हैं, परन्तु कालक्रम-व्यतिक्रम के अनुसार सत्कार्यों में बहुधा शिथिलता आ जाती है, यही कारण है कुछ जगह प्रभात फेरियां बंद होने लगीं तो दयाद्रवित संत-हृदय भला जीवों के इस कल्याणपथ में लगते विराम को कैसे देख सकता था | पूज्यश्री बाबा महाराज की प्रेरणा से पुनर्जागरण की अविरल धारा फिर से प्रवाहित होने लगी | जीव-कल्याण का एकमात्र साधन भगवन्नाम ही इस कलियुग में सहज सुलभ हो सकता है जो न केवल मानमन्दिर के प्रयास की ही कोई प्रतिबद्धता है अपितु हर अध्यात्म से जुड़े प्राणी को इसमें सहयोग करना चाहिए | ‘एक भगवन्नाम’ दान करने की तुलना (समानता) अन्य किसी भी साधन से नहीं हो सकती –

गोकोटि दानं ग्रहणेषु काशी माघे प्रयागे यदि कल्पवासी ।
यज्ञायुतं मेरुसुवर्ण दानं गोविन्द नाम्ना न भवेच्च तुल्यम् ॥

(पद्मपुराण)

मानमन्दिर द्वारा ‘श्रीभगवन्नाम-दान’ के परम पुनीत कार्य में परमोदार स्वरूप ब्रजवासियों का भी सक्रिय सहयोग मिल रहा है, यथा कामवन क्षेत्र के सैकड़ों गांवों में प्रभातफेरी व भगवन्नाम की रसधारा प्रवाहित करने में सूरजबाग कॉलोनी कामा निवासी ‘रूपी पंडितजी’ की प्रमुख भूमिका है, ऐसे ब्रजवासी वास्तव में जगतपूज्य हैं |

जिसमें ‘अहम्’ नहीं है और जिसकी बुद्धि लिप्त नहीं है, ‘लिप्त’ अर्थात् कहीं चिपकी नहीं है, आसक्त नहीं है; वह यदि सारे संसार की हत्या भी कर दे, फिर भी उसे पाप नहीं लगेगा। इसलिए ‘अहम्’ से रहित होकर कर्म करना चाहिए।

कामा क्षेत्र में किये गये हरिनाम-प्रचार से प्रभात-फेरी में हुई प्रगति – (संलग्न सूची)

गाँवों के नाम (कामां क्षेत्र)	प्रभात फेरी में जाने बाले ब्रजवासी **प्रचार के पूर्व स्थिति**	प्रभात फेरी में जाने बाले ब्रजवासी **प्रचार के बाद की वर्तमान स्थिति**
सतवास	०५	३०
ऐंचवाड़ा	०३	२०
किरावता	०२	५०
लोहागढ़	००	२५
सहेड़ा	०२	२५
कलावटा	००	२०
बादली	००	१५
बंडौर	०२	१०
बाड़	००	१५
आसूका	०४	४०
कनवाड़ी	१०	३५
कुलवाना	०२	२६
नगला चाहरा	००	१५
लेहसर	०१	२०
नगला गोपीनाथ	०३	१५
नेतवारी	०४	३५
बझैरा	०३	२२

विगत एक माह में कामां क्षेत्र के कुल गाँवों में किया गया हरिनाम व प्रभातफेरी प्रचार (गाँवों की सूची) :-

१.पसोपा २. अन्धोप ३. सुनहरा ४. पलसों ५. बठैन-कलां ६. बझैरा ७. गुरीरा ८. नेतवारी ९. वादीपुर१०.गयाकुंड-कामवन ११. सूरजबाग-कामवन १२. कलावटा १३. छोटा घाटा १४. बड़ा घाटा १५. सतवास १६. एंचवाडा १७. किरावता १८. पथवारी १९. लोहागढ़ १९. बोलखेड़ा २०. लेहसर २१. बुडाका २२. मातुकी २३. बाड़ २४. गोपीनाथ का नगला २५. बिलोंद २६. बादली २७. आसूका २८. कनवाड़ी २९. बरनोल ३०. कुलवाना ३१. भट्टकी ३२. नगला चाहर ३३.सहेड़ा ३४.धमारी ३५. सेऊ ३६. परमदरा ३७.सबलाना ३८. खानपुर ३९. पल्ला ४०. धमसिंघा ४१. बरहाना

> माँ का, बाप का, स्त्री का, पति का सहारा क्यों लेते हैं? क्योंकि आसक्ति है वहाँ पर, इन सबका सहारा लेने से ही भगवान् का आश्रय छूट जाता है। इसलिए भगवान् ने कहा – 'मेरा ही आश्रय करो, तो माया से पार हो जाओगे।'

परमपावनकारी सर्वसुहृद 'भगवद्-भागवतजन'

श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित श्रीभागवतजी (२२/२/१९८५)

संकलनकर्त्री एवं लेखिका- साध्वी ललिता जी, मानमन्दिर, बरसाना

(गतांक से आगे-) द्वारका पहुँचने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने शंख बजायो | शंख की ध्वनि सुनकर द्वारिका की प्रजा समझ गयी कि हमारे प्रभु आ गये हैं | सभी द्वारिकावासी आकर श्यामसुन्दर की स्तुति करने लगे – "हे प्यारे ! हम आपके चरणन की शरण में हैं, हे प्रभु ! हम आपको नमस्कार करें हैं, आप ही हमारे माता-पिता हो, आप ही पति और आप ही गुरु हो | जब कभी आप द्वारिका से बाहर चले जाओ तब हमको एक क्षण भी करोड़ों युग के समान लगे हैं |" ऐसे कहते भये प्रजा ने द्वारिका की शोभा को वर्णन कियो | उनकी स्तुति सुनते भये भगवान् द्वारिका के भीतर प्रवेश करके अपने महलन में पहुँचे | सबसे पहले देवकी जिनमें प्रमुख हैं, उन सातों माताओं को उन्होंने प्रणाम कियो | उन माताओं ने अपने पुत्र को बड़ो प्रेम दियो और फिर श्रीकृष्ण महल के भीतर अन्तःपुर में गये तो उनकी जितनी भी १६,१०८ महारानियाँ थीं, अपने पति को देखकर सर्वप्रथम उन्होंने अपने व्रत छोड़े, 'व्रत' कहा है तो शास्त्र को ऐसो नियम है कि जा स्त्री के पति परदेस गये हों तो वाको इतने काम नहीं करनो चाहिये –

क्रीडां शरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम् |
हास्यं परगृहे यानं त्यजेत्प्रोषितभर्तृका ||

(याज्ञवल्क्य स्मृति)

स्मृति ग्रन्थों में ऐसो लिखो है कि पति के परदेस में होने पर स्त्री को खेलवो-कूदवो, शरीर को सजायवो, समाज के जो उत्सव वगैरह हैं, उनमें भाग लेयवो, हास-परिहास करनो, दूसरे के घर जायवो, ये सब काम बन्द कर देनो चाहिये | द्वारिका की रानियों ने ये सब व्रत अपने पति श्यामसुन्दर को देखकर छोड़ दियो और तीन प्रकार से उनसे मिलन कियो | एक तो वे अपने नैनन से श्रीकृष्ण को देखकर अपने हृदय में ले गयीं | नेत्र, हृदय और अपने बालकन के आलिंगन द्वारा उन्होंने अपने पति से मिलन कियो | हस्तिनापुर की नारियों की तरह द्वारिका की रानियों की भी आँखन में आँसू आये परन्तु उन्होंने आँसुअन को रोक लियो कि कहीं श्यामसुन्दर को ऐसो न प्रतीत हो कि हमारे विरह में ये बहुत दुःखी रहीं | वाके बाद में श्रीकृष्ण की महिमा लिखी है कि इतनी रानीयन के बीच में रहते भये भी वे उनको मथित नहीं कर सकीं और वे सब अपने पति की बहुत सेवा करतीं | उनके बीच में श्यामसुन्दर समान रूप से स्थित रहते | अब शौनकजी ने सूतजी से प्रश्न कियो कि महाराज ! बालक परीक्षित को का भयो जाकी रक्षा भगवान् ने की थी | सूतजी बोले कि धर्मराज भगवान् के जिलाए भये वा बालक को पालन करवे लग गए, जाकी रक्षा के लिए भगवान् उत्तरा के गर्भ में प्रवेश कर गये, वा बालक को गर्भ में ही कृष्ण के दर्शन हो गए | वाने देख्यो कि एक पुरुष श्याम रंग को है और चारों तरफ गदा घुमातो भयो हमारी रक्षा कर रहो है | वा बालक को नाम परीक्षित क्यों पड़ो, 'परि' माने चारों ओर जो देख रह्यो है कि श्याम रंग को पुरुष जो हमारी रक्षा कर रह्यो है, यह कौन है | छोटो-सो बच्चा जब पैदा हो जाये और तुम उसके पास जाओ तो नये-नये आदमी को बड़े ध्यान से देखैगो और मन में सोचैगो कि ये कौन है, कौन है, या प्रकार धीरे-धीरे सबको पहचानेगो | थोड़े दिन में अपनी मैया को समझेगो कि हाँ, ऐसे रंग वारी हमारी माँ है फिर जब पहचानवे लग जाए तो अपनी माँ को देखते ही हँसवे लग जायगो, अपनी माँ को कछू दिन में पहचाने तो बच्चा की ऐसी आदत होय | जब उत्तरा के गर्भ में महाराज श्यामसुन्दर गये तो बालक तो बालक ही है, आँखन को फाड़-फाड़ के देखने लग्यो कि यह कौन है, कैसो मलूक है, श्याम रंग को है, गदा लेके हमारे चारों तरफ खिलौना की तरह घूम रह्यो है | या लिए परीक्षित शब्द की यहाँ व्युत्पत्ति की गयी है – "परि-ऐच्छत कः इत्यसौ" अर्थात् बच्चा सोच रह्यो है कि ये कौन है, कौन

है, चारो ओर देख रह्यो है, सो वाको नाम परीक्षित है गयो | कृष्ण-दर्शन जाको गर्भ में ही है गये, यह लीलाधारी की लीला है | बालक को जन्म होवे के बाद युधिष्ठिर ने प्रजातीर्थ काल में बहुत सो दान दियो | प्रजातीर्थ काल काहे से कहें ? प्रजातीर्थ काल वासे कहें कि जब बच्चा पैदा होय तो जब तक नाल छेदन नहीं कियो जाये तब तक सूतक नहीं लगै | नालछेदन से पहले के समय को प्रजातीर्थ काल कहैं, या समय में जो दान दियो जाय, वो अक्षय हो जाय, ये नियम है, अरे वाको कभी विनाश नहीं होय, या लिए प्रजातीर्थकाल में युधिष्ठिर ने बड़ो दान दियो, ब्राह्मण लोग बड़े प्रसन्न भये | 'विष्णु' - भगवान् श्यामसुन्दर से, 'रात' - रक्षा की गयी, या लिए वा बालक को नाम 'विष्णुरात' पड़ो | ब्राह्मणन को दान मिलो तो वे भविष्यवाणी करवे लग गये कि ये जो बालक है, याय प्रजारक्षण में इक्ष्वाकु समझ लो, दशरथ पुत्र राजा रामचन्द्र की तरह ये बड़ो सत्यप्रतिज्ञ होगो | उन्होंने बालक को राम की उपमा दीनी तथा यह भी बतायो कि भरत की तरह यह यज्ञ करवे वारो होगो और वीर ऐसो होगो जैसे दोनों अर्जुन, एक तो अपने पितामह अर्जुन की तरह और दूसरो सहस्त्रबाहु अर्जुन की तरह | ब्राह्मणन ने आगे कह्यो कि आखिर में शमीक मुनि के बेटा श्रृंगी ऋषि के द्वारा याको शाप दियो जायगो, शाप में तक्षक नाग से अपनी मृत्यु को समाचार सुन करके ये व्यासजी के बेटा शुकदेवजी से भागवत सुनैगो | जब परीक्षितजी छोटे-से बच्चा के रूप में पैदा भये तो बाहर चारों ओर आँख फाड़-फाड़ कर देख्यो करते कि वो सुंदर पुरुष कहाँ गयो, जो गर्भ में दिखाई पड़ो, याय लिये उनको नाम परीक्षित रख्यो गयो | युधिष्ठिरजी ने तीन अश्वमेध यज्ञ कियो और वाके बाद में उनको अश्वमेध यज्ञ करा करके भगवान् अपने नित्य धाम को चले गये | उधर विदुरजी ने मैत्रेय ऋषि से श्यामसुन्दर की सब बात सुनी कि वे या संसार से चले गये हैं तब विदुरजी हस्तिनापुर गये, उनको देख करके धर्मपुत्र युधिष्ठिरजी तथा बड़े भाई धृतराष्ट्र आदि ने बड़ो स्वागत कियो | युधिष्ठिरजी ने विदुरजी से बहुत अच्छी बात कही कि आप जैसे भक्त लोग तीर्थयात्रा क्यों करवे जाओ, जो भगवान् को भक्त है वो तीर्थ में क्यों जाये, तीर्थ वाको पवित्र नहीं कर सकैं, वो (भक्त) ही जाके तीर्थ को पवित्र करें | आगे गंगाजी के प्रकरण में यह प्रसंग आवेगो जब गंगाजी राजा भागीरथ को बोली हैं कि मैं तो मृत्युलोक में नही जाऊँगी क्योंकि पापी लोग मेरे जल में अपने सब पाप धोयेंगे तब भागीरथजी ने कही – नहीं, संत लोग आकर के तुम्हारे जल में नहायेंगे और पापी लोग तुम्हारे में जो पाप छोड़ जायेंगे, उन्हें संत लोग नष्ट कर देंगे | युधिष्ठिर ने विदुरजी से कही – या लिये आप तो तीर्थन को पवित्र करवे के लिए तीर्थयात्रा को गए | आगे युधिष्ठिरजी पूछ रहे हैं कि हमारे जो रिश्तेदार हैं, हमारे प्रेमी हैं, श्यामसुन्दर को यदुवंश है, वाको कहा हालचाल है तो विदुर जी छुपा गए और सोचने लगे कि इनको हम कह देंगे कि श्यामसुन्दर अपने धाम को चले गये तो ये पाण्डव लोग बहुत दुखी होंगे और अपने प्राण छोड़ देंगे, या लिये विदुरजी ने कछु नहीं कह्यो और वे कछु दिन वहाँ रहे क्योंकि इनको भी श्राप मिलो है, ये यमराज (धर्मराज) हैं और अपने भाई धृतराष्ट्र के उद्धार के लिए कछु दिन उनके पास रहे | विदुरजी ने विचार कियो कि मेरे बड़े भैया, जिनके सौ पुत्र युद्ध में मारे गए फिर भी देखो, ये जीने की इच्छा कर रहे हैं तो वे अपने भाई से बोले - अरे राम-राम, देखो, इनके सौ बेटा भीम ने मार दिए फिर भी ये गृहपाल (कुत्ते) की तरह पाण्डवन के दरवाजे पड़े हैं, आदमी की कैसी आसक्ति होती है शरीर में और अपने बेटा-बेटीन में | एक बात यहाँ विदुरजी ने बहुत अच्छी कही है कि अंत समय मनुष्य को अपनो शरीर कैसे छोड़नो चाहिये, बहुत प्रसिद्ध श्लोक है | हम लोग शरीर छोड़वो अच्छो तब समझें जब चार आदमी सेवा करवे वाले होंय, कोई दवा कर रहो है, कोई पांव दाब रहो है जबकि विदुरजी कह रहे हैं कि धीर पुरुष ऐसे शरीर छोड़े है – **गतस्वार्थमिमं देहं.....**(१/१३/२५) - पहले तो या शरीर से खूब स्वार्थ निकाले अर्थात् भजन करे और फिर विरक्त हो जाये, बंधन को छोड़ करके ऐसी जगह शरीर छोड़े, जो 'अविज्ञातगति' कहलाय यानि जहाँ कोई रिश्तेदार-नातेदार सेवा करवे वारो, पानी देवे वारो नहीं होय, उनको पतोऊ नहीं पड़े कि हमारे सम्बन्धी को शरीर कब छूटौ, याको कहें शरीर त्याग करवो - **अविज्ञातगतिर्जह्यात्** |

भगवान भक्तों से कितना प्रेम करते हैं.. इसको हम लोग समझ नहीं सकते.. अगर समझ जायें तो उसी दिन माया समाप्त हो जायेगी।